।। ओ३म् ।।

पाक्षिक

परोपकारी

• वर्ष ६१ • अंक १ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • जनवरी (प्रथम) २०१९

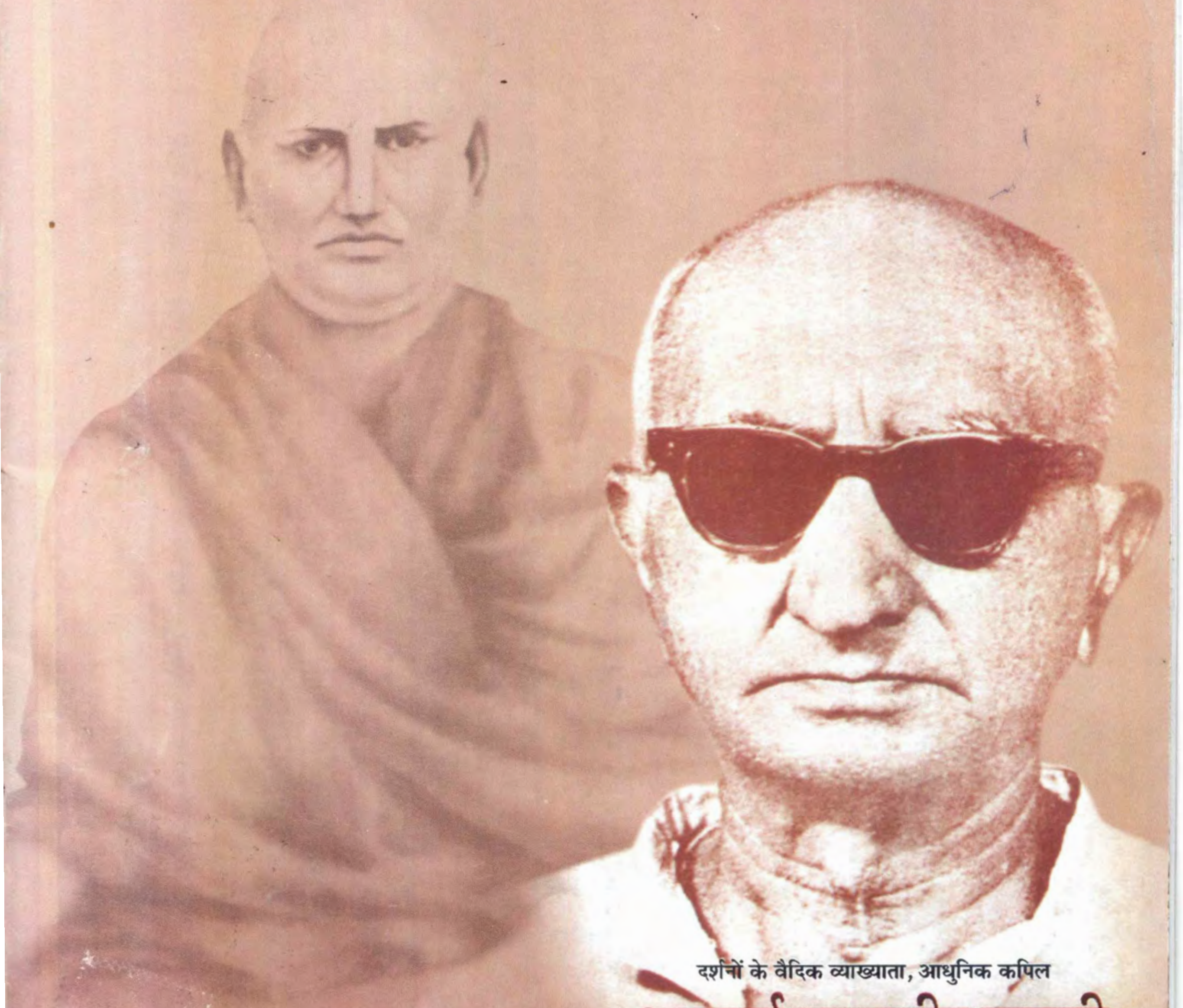

दर्शनों के वैदिक व्याख्याता, आधुनिक कपिल

आचार्य उदयवीर शास्त्री

जन्म	मृत्यु
पौष शुक्ल दशमी, सं. १९५१ वि. तदनुसार ६ जनवरी १९९५ ई.	१७ जनवरी १९९१ ई.

ऋषि मेला २०१८ में प्रथम दिवस के तृतीय सत्र की झलकियाँ

वेद में राष्ट्र की अवधारणा

श्री कन्हैयालाल आर्य
मंत्री-परोपकारिणी सभा

डॉ. राजेन्द्र विद्यालङ्कार
कुरुक्षेत्र (सदस्य-परोपकारिणी सभा)

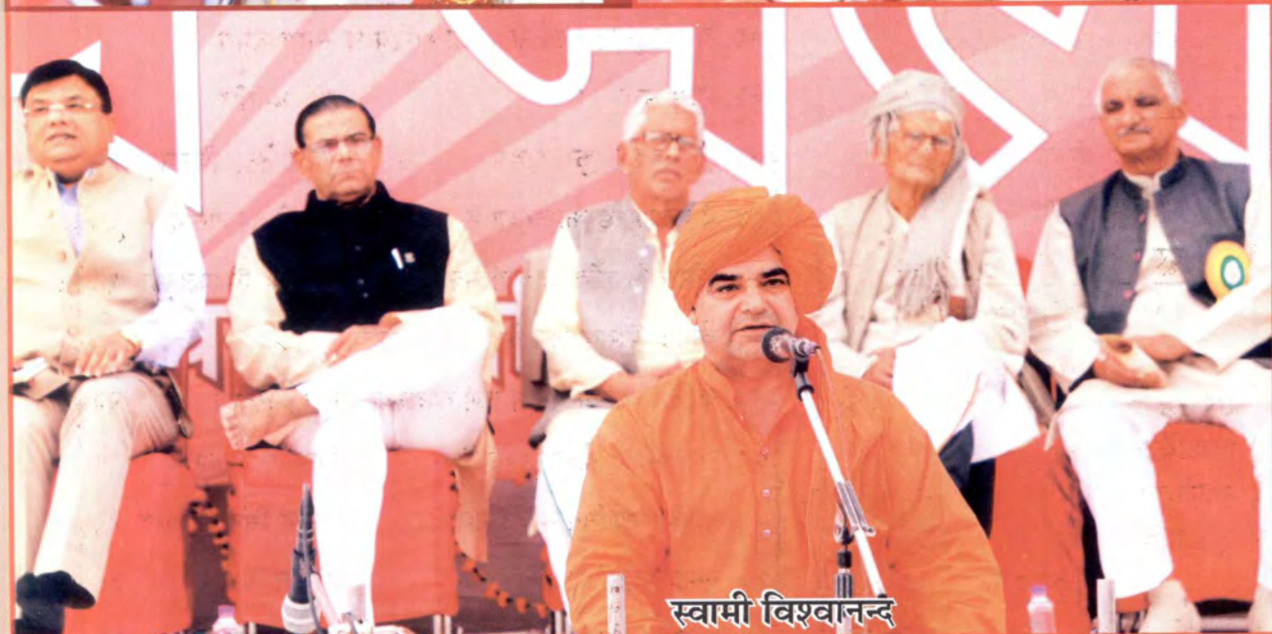
स्वामी विश्वानन्द

डॉ. सोमदेव शतांशु
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

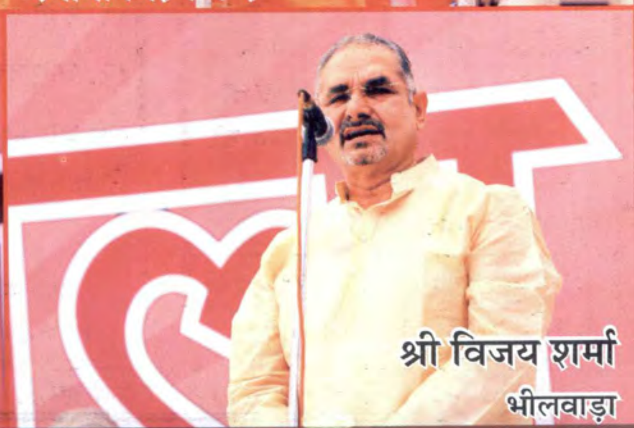
श्री विजय शर्मा
भीलवाड़ा

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६१ अंक : ०१

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: पौष कृष्ण २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,

केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.

त्रिवार्षिक-५८० रु.

आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर

त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जनवरी प्रथम २०१९

अनुक्रम

०१. वीर हनुमान् आर्य राजवंशी क्षत्रिय थे सम्पादकीय		०४
०२. मृत्यु सूक्त-२१	डॉ. धर्मवीर	०९
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	११
०४. देह ब्रह्माण्ड का नक़्शा है	स्वामी दर्शनानन्द	१५
०५. संसार के पाँच आध्यात्मिक शत्रु	बुद्धदेव विद्यालङ्कार	१८
०६. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२१
०७. जाति व्यवस्था बनाम वर्ण व्यवस्था	दक्ष भारद्वाज	२३
०८. स्वच्छन्दता मानवता के लिये...	ओमप्रकाश आर्य	२६
०९. फलित ज्योतिष की अमान्य.....	उम्मेद सिंह विशारद	२९
१०. पुस्तक-समीक्षा	सोमेश 'पाठक'	३१
११. शङ्का समाधान- ४०	डॉ. वेदपाल	३२
१२. आधुनिक कपिल....	सोमेश 'पाठक'	३८
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

वीर हनुमान् आर्य राजवंशी क्षत्रिय थे

विगत कुछ सहस्राब्दियों में भारतीय सांस्कृतिक और ऐतिहासिक यथार्थ को असम्भव मिथकीय शैली, अन्धविश्वासी जनों और भारतीयता विरोधी लेखकों ने इतना विकृत और परिवर्तित कर दिया है कि उसके यथार्थ रूप में लौटाना कठिनतम हो गया है। विरोधी लेखकों ने अधिकांश को मिथक और कल्पित घोषित करके उसके अस्तित्व को ही मिटाने का प्रयास किया है। अन्धविश्वास और आस्था के नाम पर तर्कहीन, असत्य और असंभव, सब कुछ स्वीकार्य हो रहा है और यदि उसका सत्य स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है तो उन लोगों की आस्था छुई-मुई की तरह आहत हो जाती है। हमारे कानून का यह व्यवहार भी चिन्तनीय है कि अभिव्यक्ति की समान स्वतन्त्रता होने पर भी उनके मामलों में आस्था भंग के प्रकरण को झटपट स्वीकार कर लिया जाता है, जबकि दूसरी ओर मानवीय प्रगति और सत्य का जो बौद्धिक आस्था भंग हो रहा है, उस पक्ष को उपेक्षित कर दिया जाता है। ऊपर से राजनीति ने उस विकृति को और अधिक बल प्रदान किया है।

इसे भारतीय लोकतान्त्रिक राजनीति की विवशता कहें या विडम्बना, उसके चक्रव्यूह में फँसकर सब सत्य और यथार्थ अभिमन्यु के समान बलिदान हो जाते हैं। अवसरवादी राजनीति में सत्य को ग्रहण करने की न तो इच्छाशक्ति है और न साहस है। पिछले कुछ समय से एक प्रवृत्ति पनपती जा रही है, महापुरुषों के विराट् व्यक्तित्व को सीमित करने की। आर्यों को अनार्य सिद्ध करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं, ऋषि-वंश में उत्पन्न आदिकवि वाल्मीकि जैसे ब्रह्मर्षि के साथ डाकू होने की घटना को जोड़कर उनके जीवन का अवमूल्यन किया गया। गत दिनों, एक अप्रत्याशित घटना हुई। एक राजनेता ने राजवंश में उत्पन्न आर्य क्षत्रिय महापुरुष वीर हनुमान् को दलित घोषित कर दिया। अन्ध आस्थावादी लोगों ने अपने ऐतिहासिक महापुरुषों का और अधिक अपमान किया है। वंशनामों और प्रतीकार्थों को न समझकर अपने श्रद्धेय महापुरुषों में किसी को बंदर, किसी को हाथी, किसी को वराह, किसी को मत्स्य, किसी को अश्व पशु बना दिया। व्यसनी और स्वार्थी, कथित अनुयायियों ने अपने व्यसनों की पूर्ति के लिए अपने श्रद्धेय महापुरुषों को ही मांस, मदिरा, भांग, अफीम, गांजा आदि का सेवन करने वाला और अनाचार का प्रवर्तक बना दिया। ऐसा करके जहाँ हम अपने महापुरुषों को कलंकित कर रहे हैं, वहां अपने इतिहास और संस्कृति को भी दूषित कर रहे हैं। ऐसी धारणाओं से विश्व के बौद्धिक जगत् में हम अपना उपहास कराते हैं। एक बालक भी जानता है कि कोई पशु मनुष्यों से न तो भाषिक संवाद कर सकता है और न बौद्धिक व्यवहार। फिर भी हम अपने अन्धविश्वासों को छोड़कर सत्य को स्वीकार नहीं करते।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उक्त अन्धविश्वासों और विद्रूपों के विरुद्ध सत्य को प्रकट करने और असत्य का परित्याग कराने का साहस किया तो उन्हें बलिदान होना पड़ा और उनके द्वारा स्थापित 'आर्यसमाज' ने उनके विरुद्ध संघर्ष किया तो उलटा उसे रुढ़िवादी समाज और राजनीति से संघर्ष झेलना पड़ रहा है। गलत धारणाएँ भारतीय संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, समाज और देश के हित में नहीं हैं। विदेशियों द्वारा कल्पित आर्य-अनार्य, आर्य-द्रविड़, उत्तर-दक्षिण आदि की धारणाओं ने भारत की एकता, अखण्डता और समरसता को बिगाड़कर भारतीय समाज और देश का अहित किया है। कम से कम, अब तो हमें भविष्य के लिए चेत जाना चाहिए।

इस लेख का उद्देश्य वीर शिरोमणि, श्रीराम-भक्त हनुमान् और उनके वानर-समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करना है। उसकी जानकारी के लिए हमारे पास रामायण-काल के सर्वाधिक निकट, प्रामाणिक और प्राचीन ग्रन्थ ऋषि वाल्मीकि रचित 'रामायण' है। यद्यपि उसमें भी समय-समय पर प्रक्षेप हुए हैं, जिनका ज्ञान हमें उसमें प्राप्त परस्पर-विरोधी और असम्भव कथनों से हो जाता है, पुनरपि उपलब्ध मूल कथन यथार्थ को स्पष्ट कर देते हैं। आइये, उनके आधार पर तथा कुछ अन्य परवर्ती ऐतिहासिक विवरणों

के सन्दर्भ में प्रतिपाद्य विषय पर चिन्तन करें।

हनुमान् का वंश एवं परिचय-

हनुमान् और उनका वानर-समाज बन्दर नहीं थे। वे मनुष्य देहधारी थे और उनकी आकृति, रूप-रंग, शरीर मानवों के सदृश थे। 'वानर' उनके वंश का नाम था। भारतीयों की वंशावलियों में आज भी दर्जनों ऐसे वंश-नाम, गोत्र-नाम और प्रतीक-नाम मिलते हैं जो पशु-पक्षियों के नाम भी हैं, किन्तु हैं वे मनुष्य। वानर-समाज आर्यों के समाज के अन्तर्गत था। उसकी अधिकांश संस्कृति-सभ्यता, शिक्षा-दीक्षा, व्यवस्था, परम्पराएँ, वंशावली आदि आर्यों से सम्बद्ध थी। वानर-समाज में वर्णाश्रम व्यवस्था प्रचलित थी।

संस्कृत के ऐतिहासिक विवरणों में उल्लेख है कि 'वानर' वंश का मूल उद्‌भव ऋषि पुलह और उनकी पत्नी हरिभद्रा से हुआ था। माता के नाम के आधार पर वानर वंश को 'हरि वंश' और 'हरि गण' भी कहा जाता है। बाद में वानर वंश की अनेक उपवंशीय शाखाएँ हो गईं जो सम्पूर्ण भारत में फैली हुई थीं। अकेले किष्किन्धा राज्य में इनकी ग्यारह शाखाओं के वानर जन रहते थे। वे थे- वानर, ऋक्ष, सिंह, व्याघ्र, शरभ, द्वीपी, नील, शल्यक, मार्जार, लोहास, मायाव। वन-क्षेत्रों में निवास करने और वन्य-पदार्थों से अपनी आजीविका चलाने के कारण इनको 'वानर' कहा जाता है। वानर का पर्याय नाम 'वनौकस्' भी रामायण में प्रयुक्त हुआ है। जिसका अर्थ है-'वन में निवास करने वाले जन', जैसे आर्यों में तीसरा आश्रम ग्रहण करके वन में निवास करने वालों को 'वानप्रस्थ' और 'वनस्थ' कहा जाता है। कुछ अन्य नामों द्वारा भी इस प्रसंग को समझा जा सकता है, जैसे-पहाड़ों के क्षेत्र में रहने वालों 'पहाड़ी', सरस्वती नदी के क्षेत्र में रहने वालों को 'सारस्वत', पाँच नदियों के प्रदेश पंजाब के निवासियों को 'पंजाबी' कहा जाता है। सिन्ध, सिन्धी (हिन्द, हिन्दी) नाम भी सिन्धु नदी के क्षेत्र में निवास करने के आधार पर प्रचलित हुए हैं।

हनुमान् के पिता का नाम केसरी था। ये सुमेरु पर्वत के किसी भाग के राजा थे। ये सुग्रीव के निमन्त्रण पर रावण के विरुद्ध युद्ध में श्रीराम की सहायता के लिए एक हजार योद्धा लेकर आये थे और लड़े थे। हनुमान् की माता का नाम अंजना था। यह वानर-वंश के राजा कुञ्जर की पुत्री थी। हनुमान् के परिवार के किसी अन्य सदस्य का उल्लेख रामायण में नहीं मिलता, किन्तु एक स्थल पर हनुमान् को राजा केसरी का ज्येष्ठ पुत्र कहा है (**ज्येष्ठः केसरिणः पुत्रः...हनूमानिति,** ६.३८.१०)। इससे संकेत मिलता है कि हनुमान् के अन्य भाई भी थे। पुराणोक्त वंशावलियों में उपलब्ध विवरण से ज्ञात होता है कि हनुमान् के ये चार भाई थे-श्रुतिमान्, केतुमान्, मतिमान् और धृतिमान्। हनुमान् का अपना कोई परिवार नहीं था क्योंकि वे आजीवन ब्रह्मचारी रहे। संस्कृत साहित्य में उनको 'ब्रह्मचारी', 'ऊर्ध्वरेता', 'जितेन्द्रिय' कहकर प्रशंसित किया गया है।

हनुमान् अनेक गुणों से सम्पन्न थे। बुद्धिमत्ता, नीतिमत्ता, शक्ति-सम्पन्नता, वीरता, निर्भीकता आदि गुणों का एकत्र मिलना कठिन है। मित्रता के कारण वे सुग्रीव के सचिव बने और श्रद्धा के कारण श्री राम के सेवक और राजदूत बने। सुग्रीव और श्री राम के सत्यनिष्ठ सहयोगी एवं संकटमोचक होते हुए भी हनुमान् विनम्रता की प्रतिमूर्त्ति थे। ऋषि वाल्मीकि लिखते हैं-

शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं प्राज्ञता नयसाधनम्।
विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालयाः।।

(उत्तरकाण्ड ३५.३)

'शूरवीरता, चतुरता, शक्ति, धैर्य, पांडित्य, नीतिज्ञता, पराक्रम और प्रभावशीलता, हनुमान् इन महान् गुणों की खान थे।' हनुमान् के हाव-भाव, व्यवहार, भाषा को देखकर लक्ष्मण ने श्री राम के सामने विश्वास व्यक्त किया था-

नानृतं वक्ष्यते वीरो हनूमान् मारुतात्मजः।

(किष्किन्धा ४.३२)

'श्री राम! मैं विश्वास के साथ कहता हूँ कि पवनपुत्र वीर हनुमान् कभी झूठ नहीं बोल सकता।' हनुमान् 'शुभमति' थे (किष्किन्धा, ४.३५), 'महानुभाव' थे (किष्किन्धा २.२९), अपराजेय योद्धा क्षत्रिय थे। सुग्रीव ने हनुमान् को 'मनुष्य' कहा है (**मनुष्येण विज्ञेयाः**, किष्किन्धा २.२२), हमारा मानना है इतने मानवीय गुणों से सम्पन्न व्यक्ति महामानव होता है।

राज्य और राजधानी

वानर समुदाय का प्रमुख राज्य किष्किन्धा के आस-पास का क्षेत्र था। किष्किन्धा ही उसकी राजधानी का नाम था। वर्तमान कर्नाटक प्रदेश में, जिला 'बेल्लारी' के स्थान 'हम्पी' के निकट, तुंगभद्रा नदी के तट पर स्थित 'अनागोंदी' ग्राम को प्राचीन किष्किन्धा माना जाता है। यह एक समृद्ध, विकसित, भव्य नगरी थी जो पहाड़ियों के बीच स्थित थी। इसकी शोभा देखते ही बनती थी। इसके मध्य में उद्यान थे, धनियों के सुन्दर भवन थे, राज-परिवार के लोगों के भव्य महल थे। सुग्रीव का महल सात ड्योढ़ी पार था, जिसके द्वार पर शस्त्रधारी वानर जन प्रहरी थे। नगरी चारों ओर से यन्त्रों से सुरक्षित थी। पाठक विचार करें कि क्या ऐसी नगरी बन्दरों द्वारा स्थापित और शासित हो सकती है?

यहाँ पैतृक परम्परा से स्थापित वानरवंशियों का राज्य था। पहले यहाँ का राजा ऋक्षराज था। उसके देहान्त के बाद उसका बड़ा पुत्र बाली राजा बना। श्री राम द्वारा बाली का वध किये जाने के बाद सुग्रीव राजा बना। इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण भारत में मध्य-मध्य में वानर समुदाय के मनुष्यों के छोटे-छोटे अनेक राज्य थे। सुग्रीव द्वारा बुलाने पर रावण के विरुद्ध युद्ध में, श्री राम के पक्ष में दो दर्जन से अधिक वानर राजा उपस्थित हुए थे। रामायण में उनका विवरण उपलब्ध है।

वेद-वेदांग शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन

वाल्मीकीय रामायण में अनेक ऐसे प्रमाण प्राप्त हैं जिनसे यह जानकारी मिलती है कि वानर समुदाय में, आश्रम पद्धति से, वेद-वेदांग शास्त्रों का अध्ययन कराया जाता था। पुरुषों के समान महिलाएँ भी शास्त्रों का अध्ययन करतीं थीं। यही कारण है कि रामायण के सभी महिला और पुरुष पात्र उच्च शिक्षित हैं। हनुमान् को तो वानर समुदाय के सर्वशास्त्र-ज्ञाताओं में श्रेष्ठ विद्वान् बताया है (वीर **वानरलोकस्य सर्वशास्त्रविदां वर**, किष्किन्धा. ६६.२)। उनके लिए कवि द्वारा प्रयुक्त विशेषण उन्हें उच्चकोटि का गम्भीर विद्वान् सिद्ध करते हैं-'वाक्यकोविद, बुद्धिविज्ञानसम्पन्न, वाक्यकुशल, वाक्यविशारद, सुमहाप्राज्ञ, ...पण्डित आदि।'

...ना की खोज करते हुए, ऋष्यमूक पर्वत की ओर आते हुए श्री राम और लक्ष्मण को देखकर भयभीत सुग्रीव हनुमान् को उनका भेद लेने के लिए उनके पास भेजता है। हनुमान् वानर का वेश उतार कर ब्राह्मण का वेश धारण कर उनके पास जाते हैं। वहाँ हनुमान जिस शुद्ध संस्कृत भाषा और परिष्कृत शैली में श्री राम से वार्तालाप करते हैं, उसे सुनकर लक्ष्मण इन शब्दों में हनुमान् की विद्वत्ता की प्रशंसा करते हैं-

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं विभाषितुम्।।
नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधाश्रुतम्।
बहु व्याहरतानेन न किंचिदपशब्दितम्।।

(किष्किन्धा. ३.२८.२९)

अर्थात्-'जिसने विधि-अनुसार ऋग्वेद का अध्ययन न किया हो, जिसने यजुर्वेद का अध्ययन-मनन न किया हो, जो सामवेद का विद्वान् न हो, वह इस प्रकार शुद्ध भाषा और उत्तम शैली में वार्तालाप नहीं कर सकता। निश्चय ही इन्होंने संस्कृत के व्याकरण का कई बार अभ्यास किया है, क्योंकि बहुत वार्तालाप करने पर भी इन्होंने एक भी शब्द अशुद्ध नहीं बोला है।।' ऐसा ही प्रशंसात्मक वर्णन अन्यत्र कई स्थलों पर आया है। वहाँ हनुमान् को व्याकरण और छन्द-शास्त्र का विद्वान् वर्णित किया है।

हनुमान् साहित्यिक और बोलचाल की संस्कृत, दोनों के ज्ञाता थे। सीता की खोज लेने के बाद वे विचार करते हैं कि सीता से मुझे उस भाषा में बात करनी चाहिए, जिससे मुझ पर विश्वास हो सके-

वाचं चोदाहरिष्यामि मानुषीमिह संस्कृताम्।।
यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम्।
रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति।।

(सुन्दर. ३०.१७,१८)

अर्थात्- 'मैं सीता से साधारण मनुष्यों में बोली जाने वाली संस्कृत भाषा में बात करूँगा, क्योंकि यदि मैं द्विज वर्ग द्वारा बोली जाने वाली साहित्यिक संस्कृत में बात करूँगा तो सीता मुझे रावण समझकर डर जायेगी।'

इस सन्दर्भ से कई तथ्य स्पष्ट होते हैं-(१) हनुमान कई भाषाएँ जानते थे। (२) रावण साहित्यिक संस्कृत का व्यवहार करता था। (३) रामायण-काल में बोलचाल की भाषा संस्कृत थी। (४) वानर समुदाय के जनों में संस्कृत

पढ़ी और बोली जाती थी। संस्कृत आर्य समुदाय की भाषा थी।

इस प्रकार हनुमान् शस्त्र और शास्त्र दोनों में प्रवीण वीर विद्वान् था।

किष्किन्धा का राजा बाली भी 'महाबली' और 'महाप्राज्ञ' था। उसने भी वेद-शास्त्रों का अध्ययन किया था। एक दिन एकान्त में घूमते हुए बाली को देखकर रावण छलपूर्वक उस पर प्रहार करना चाहता था। बाली भी उसके छल को भाँप गया। वह भी भ्रमित करने के लिए मन्त्र-जाप की मुद्रा में खड़ा होकर वेदमन्त्रों का उच्चारण करने लगा। पास आते ही बाली ने रावण को झपटकर काँख में दबोच लिया। वाल्मीकि लिखते हैं-

''जपन् वै नैगमान् मन्त्रान् तस्थौ पर्वतराट् इव''

(उत्तर. २४.१८)

अर्थात्- ''बाली वेदों के मन्त्रों का जाप करते हुए शान्त और पर्वत के समान निश्चल खड़ा था।''

सुग्रीव ने भी निश्चित रूप से शास्त्रों का अध्ययन किया था। उसे भूगोलशास्त्र का व्यापक एवं सूक्ष्म ज्ञान था। सीता की खोज के लिए भेजे गये वानरों का उसने सटीक मार्गदर्शन किया था। वाल्मीकि ने सुग्रीव का वर्णन 'महावीर्य','धृतिमान्','मतिमान्','महाबल पराक्रमी' आदि गुणों से किया है (अरण्य. ७२.१३,१४)। रानी तारा के पिता सुषेण सिद्धहस्त वैद्य थे। जिन्होंने युद्ध में घायल श्री राम, लक्ष्मण और अन्य वानर वीरों के प्राणों की रक्षा की थी। नल और नील की अभियान्त्रिकी (इंजीनियरिंग) विद्या की विशेषज्ञता के विषय में हम बहुत समय से पढ़ते-सुनते आ रहे हैं, जिन्होंने श्री राम की विशाल सेना के लिए मार्गों और समुद्र पर सेतु के निर्माण का अद्भुत कार्य किया। इसी प्रकार जाम्बवान्, शरभ, मैंद, द्विविद आदि यूथपतियों की शास्त्रज्ञता तथा वक्तृत्व कला का वर्णन आता है। ये सभी यूथपति राजा थे और सुशिक्षित थे।

बाली की पत्नी तारा और सुग्रीव की पत्नी रुमा भी वेदविदुषी और शास्त्रज्ञा थीं। तारा वेदमन्त्रवित् थी। सुग्रीव के ललकारने पर युद्ध के लिए नगर से बाहर जाने से पूर्व उसने पति बाली के लिए 'स्वस्तिवाचन' वेदमन्त्रों से मंगलकामना की थी। यदि बाली दूरदर्शिनी तारा का परामर्श मान लेता तो उसकी मृत्यु नहीं होती (**ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा मन्त्रवित् विजयैषिणी**, किष्किन्धा. १६.१२)। वह बाली वध के उपरान्त श्री राम से संवाद करते समय वेद के सिद्धान्तों का उल्लेख करती है। वाल्मीकि उसको 'पंडिता', 'सर्वज्ञा', 'राजनीति के सूक्ष्म विषयों की विवेचिका', 'भविष्य का आभास जानने वाली' आदि लिखकर उसकी विद्वत्ता की प्रशंसा करते हैं। रुमा ज्योतिष की विदुषी थी।

अन्य विद्याओं और कलाओं का प्रशिक्षण भी किष्किन्धा में दिया जाता था। संगीत-विद्या, भवन निर्माण-विद्या, वस्त्र-निर्माण, आभूषण-निर्माण, अस्त्र-शस्त्र-निर्माण, चित्रकारी, कशीदाकारी आदि का वर्णन रामायण में आता है।

आर्य-संस्कृति, सभ्यता और परम्पराएँ

वानरजनों में जब ऋषियों द्वारा रचित वैदिक शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन होता था, तो स्वाभाविक है कि शिक्षा-पद्धति और परम्पराएँ भी वैदिक रही हैं। इस बात का प्रमाण मिला है कि वानर यज्ञोपवीत धारण करते थे। शिक्षा आरम्भ होने से पूर्व उपनयन संस्कार के आयोजन के द्वारा यज्ञोपवीत प्रदान किया जाता है। वर्णन आता है कि बाली के अन्त्येष्टि संस्कार के अवसर पर, चिता को अग्नि देने के बाद पुत्र अंगद ने यज्ञोपवीत दायें कंधे की ओर धारण करके चिता की प्रदक्षिणा की थी (**ततोऽग्निं विधिवद् दत्वा सो- अपसव्यं चकार ह**, किष्किन्धा. २६.५०) 'अपसव्य' यज्ञोपवीत धारण करने की वह विधि है जिसमें यज्ञोपवीत दायें कन्धे पर रखते हुए उसको बायें हाथ के नीचे भाग में लटकाया जाता है। पौराणिक व्याख्याकारों ने इस तथ्य की व्याख्या में अव्याख्यात छोड़ दिया है। यह उनका पक्षपाती दुराग्रह है।

वैदिक शिक्षा-पद्धति थी, तो वह वर्णाश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत थी। हनुमान् का स्पष्ट उदाहरण है कि उसने ब्रह्मचारी रहकर वेद-शास्त्रों का अध्ययन किया था। वह आजीवन ब्रह्मचारी ही रहा। यह प्रमाण भी मिला है कि वानर अन्य आश्रम भी धारण करते थे। सीता की खोज से निराश हुआ हनुमान् प्रतिज्ञा करता है कि यदि सीता को नहीं खोज पाया तो मैं किष्किन्धा नहीं लौटूंगा, वानप्रस्थ आश्रम धारण कर लूँगा (**वानप्रस्थोभविष्यामि हि-अदृष्ट्वा**

जनकात्मजाम्, सुन्दर. १३.४०)। किष्किन्धा में विद्वान् ब्राह्मण भी थे, जिन्होंने शास्त्रविधि से बाली का अन्त्येष्टि संस्कार और सुग्रीव का राजतिलक संस्कार कराया था।

वानर जन सन्ध्या-उपासना, यज्ञ का अनुष्ठान भी करते थे। वेदमन्त्रों द्वारा सन्ध्या करने का बाली का एक लम्बा प्रसंग रामायण में वर्णित है (**वालिनं सन्ध्योपासनतत्परम्,** उत्तर. ३४.१२,२७,२९)। तारा श्री राम के सामने अपने यज्ञाधिकार पर संवाद करती है (किष्किन्धा. २४.३८)। वानरों में विवाह विधि द्वारा पति-पत्नी बनने की परम्परा थी। असत्य-भाषण को पाप माना जाता था और सत्य को पुण्य, अत: वे प्रतिज्ञा करते समय सत्य की शपथ लेते थे (**सत्येन शपाम्यहम्**, किष्किन्धा. ८.२७)। वे लोग वैदिक विधि के अनुसार नामोच्चारणपूर्वक बड़ों को चरणस्पर्श करके प्रणाम करते थे (किष्किन्धा. २३.२४)।

वानर विशुद्ध शाकाहारी थे, मांसाहार नहीं करते थे। कंद-मूल, फल-फूल, अन्न आदि पदार्थों का भोजन करते थे (**फलमूलाशनं नित्यं वानरं वनगोचरम्**, किष्किन्धा १७.२५)

संस्कार एवं धार्मिक अनुष्ठान वैदिक शास्त्रीय पद्धति से अनुष्ठित किये जाते थे। उनके अनुष्ठान के लिए वानर समुदाय में प्रशिक्षित विद्वान् ब्राह्मण थे। सुग्रीव का राज्याभिषेक महर्षियों द्वारा विहित शास्त्रीय-विधि से वेदमन्त्रों द्वारा किया गया था। इस अवसर पर यज्ञ का आयोजन किया गया था-

''मन्त्रपूतेन हविषा हुत्वा मन्त्रविदो जना:।।''
''शास्त्रदृष्टेन विधिना महर्षि विहितेन च।''
''अभ्यषिञ्चत सुग्रीवम्।''

(किष्किन्धा. २६.३०,३४,३६)

इसी प्रकार बाली का अन्त्येष्टि संस्कार भी शास्त्रविधि के द्वारा राजाओं की प्रतिष्ठा के अनुरूप किया गया था (किष्किन्धा. २५ सर्ग)। इस प्रसंग में बाली को स्पष्टत: 'आर्य राजा' कहा है (**''आर्यस्य क्रियताम्''**, **''राज्ञाम्...तादृशै: कुर्वन्तु''**, किष्किन्धा. २५.३०,३२)।

वानर-समाज में 'आर्य' सम्बोधन

आर्य संस्कृति के शिष्टाचार के अनुसार, जिस प्रकार सीता आदि स्त्रियाँ अपने पति श्री राम आदि को 'आर्यपुत्र' कहकर सम्बोधित करतीं थीं, उसी प्रकार वानर-वर्ग की रानी तारा अपने पति बाली को 'आर्यपुत्र' कहकर पुकारती थी (किष्किन्धा. १९.२७, २०.१३)। सुग्रीव भी बाली को 'आर्य' प्रयोग में वर्णित करता है (**आर्यस्य**, किष्किन्धा. २४.२९)। वानरों के लिए 'अनार्य' प्रयोग का अपशब्द था। सीता को खोज में विलम्ब करने के कारण लक्ष्मण, सुग्रीव को 'अनार्य' और 'कृतघ्न' कहकर फटकारता है (**अनार्यस्त्वं कृतघ्नश्च**, किष्किन्धा. ३४.१३)। फिर हनुमान आदि को अनार्य कैसे कहा जा सकता है?

उपर्युक्त ऐतिहासिक तथ्यों के आलोक में निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि हनुमान और उनका वानर-समाज आर्य संस्कृति का अंग था। जिन लेखकों ने उनको अनार्य कहा है उन्होंने वानर-समाज के साथ अन्याय किया है और भारतीय इतिहास को विकृत किया है। जो लोग श्रद्धा-भक्ति के नाम पर उन्हें बन्दर मानते हैं, वे अपने श्रद्धेय महापुरुष का घोर अपमान करते हैं। महामानव को पशु रूप देना उसे कलंकित करना है। सत्य तथ्यों को स्वीकार करके उन्हें ऐसा करना छोड़ देना चाहिए।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस

(२७ फरवरी २०१९)

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा परोपकारिणी सभा की स्थापना एक ऐतिहासिक घटना है। स्थापना के साथ-साथ स्वामी जी ने इस सभा को अपना उत्तराधिकारी बनाकर अपने समस्त निजी अधिकार, उद्देश्य एवं वस्तुओं का अधिकार भी सौंप दिया। एक ऋषि द्वारा किये गये इतने बड़े निर्णय की महत्ता को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा की कार्यकारिणी ने सभा का स्थापना दिवस मनाने का निश्चय किया है। यह कार्यक्रम दिनांक २७ फरवरी २०१९ को ऋषि उद्यान में ही मनाया जायेगा। आप सभी आर्यजन सादर आमन्त्रित हैं। - **मन्त्री**

मृत्यु सूक्त-२१

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

मृत्यो पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।।

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। - सम्पादक

हम इस वेद-ज्ञान की चर्चा में ऋग्वेद के दसवें मंडल के १८ वें सूक्त का विवेचन कर रहे हैं। हमने देखा था कि मृत्यु को समझने के लिए हमें जन्म की यात्रा भी समझनी होती है और जन्म की यात्रा को यदि हम समझ लें तो मृत्यु की यात्रा हमारी समझ में आ जाती है। इस जन्म को केवल जन्म नहीं कहा, इसको पुनर्जन्म कहा, पुनर्भव कहा, दोबारा होना मतलब जो भी जन्म हो रहा है वो किसी भी प्राणी का, मनुष्य का पहली बार नहीं हो रहा है, वो आत्मा का पहला जन्म नहीं है, वो बहुत सारे जन्मों के क्रम में एक जन्म है, इसलिए उसको बार-बार का जन्म, पुनर्जन्म कहा है। पिछले सन्दर्भ में हमने देखा था, आचार्य चरक ने कहा है कि यह जन्म केवल माता-पिता से नहीं होता। माता-पिता इसमें कारण हैं, लेकिन मन है, बुद्धि है वो हमारे पास स्वतन्त्र होता है, वो आत्मा के सूक्ष्म शरीर के साथ हमें प्राप्त होते हैं। हमारा स्थूल शरीर तो माता-पिता के शरीर से बनता है, किन्तु हमारा सूक्ष्म शरीर न माता-पिता के शरीर से बनता है, न ही उसका कोई अंश होता है। वो हमारे आत्मा के साथ स्वतन्त्र होता है। आत्मा उस सूक्ष्म शरीर के द्वारा ही यात्रा करता है। इस शरीर में वो सूक्ष्म शरीर के माध्यम से आता है, सूक्ष्म शरीर के रूप में ही आता है। इसलिए यह शरीर तो माता-पिता के शरीर से जुड़ा है, लेकिन सूक्ष्म शरीर माता-पिता के शरीर से नहीं जुड़ा है। क्योंकि हमने पीछे देखा था कि यदि वह आत्मा माता-पिता के आत्मा का हिस्सा होगा तो माता-पिता का आत्मा कम या समाप्त हो जाना चाहिये। लेकिन ऐसा नहीं होता, इसलिए सन्तान एक है या दस हैं, सबके पास मन है, सबके पास बुद्धि है, सबके पास आत्मा है। सबके पास अपना-अपना सूक्ष्म शरीर है, जो स्वतन्त्र है, जो ना तो किसी भाई-बहन का है, ना किसी माता-पिता का है, बाकि शरीर में माता-पिता, भाई-बहन की कुछ न कुछ समानता, कुछ न कुछ मेलजोल है।

इसको जानने के लिये विद्वानों के वचन जिसे हम आप्तोपदेश कहते हैं उसके द्वारा जानना, क्योंकि जो विद्वान् लोग हैं वो गलत नहीं बोलते, मिथ्या भी नहीं बोलते, स्वार्थ के कारण किसी के साथ अनुचित भी नहीं बोलते। क्योंकि वो सात्त्विक लोग होते हैं, सन्देह से परे होते हैं, इसलिए उनके ज्ञान में कोई रुकावट, बाधा, गलती नहीं होती वो जो कुछ कहते हैं, ठीक कहते हैं, इसलिए हम उनकी बात को ठीक मानते हैं। हम स्वयं देखते भी हैं, संसार में कोई भी दो व्यक्ति आकृति से, प्रकृति से, स्वभाव से, बुद्धि से एक जैसे नहीं हैं, ना तो दो माता-पिता ही एक से हैं, ना बच्चे ही एक से हैं, ना भाई-बहन ही एक से हैं। यह जो सबकी भिन्नता है, सबमें अन्तर है, यह उनका व्यक्तिगत है और उसमें किसी की भागीदारी नहीं है।

इसी तरह से हम इस बात को अपने मन में सोच भी सकते हैं कि कार्य को देखकर हम कारण का अनुमान करते हैं। कहीं बादल को देखकर वर्षा की संभावना करते हैं, कहीं गीलापन या ठंडी हवा से वर्षा होने का अनुमान करते हैं। वैसे ही जन्म होते हुए देखकर हमें इस जन्म की प्रक्रिया का भी अनुमान हो जाता है। मृत्यु देखकर, जन्म होगा, इसका अनुमान हो जाता है, जन्म देखकर, मृत्यु हुई थी, इसका अनुमान हो जाता है। इसके अतिरिक्त आयुर्विज्ञान में एक और तर्क काम करता है, जिसको उन्होंने युक्ति कहा है और 'युक्ति' एक बहुत ही मजबूत, दृढ़ आधार है

किसी बात को जानने समझने का। '**तिष्ठत्युपरि युक्तिज्ञः द्रव्यज्ञानवतां सदा**' किसी को रोग पता है, किसी को उसका औषध पता है, लेकिन जिसके पास युक्ति है, वो कैसे भी रोग में किसी भी तरह के औषध को काम में ले लेता है।

युक्ति क्या है? देखी हुई जो चीज है, उसके काम करने का जो प्रकार है, वस्तु के गुण-दोष हैं, वैसे ही न देखी वस्तु में उसका उपयोग करना युक्ति है। जो प्रयोग में नहीं लाया गया है, वहाँ उस प्रकार को अपनाना, इसको युक्ति कहते हैं। युक्ति से भी यही पता लगता है कि जैसे हम बीज डालते हैं, उसमें पानी देते हैं, खाद देते हैं, ऋतु के अनुकूल वातावरण देते हैं और उससे एक पौधा जन्म लेता है, एक वृक्ष बनता है। एक बीज से कोई वृक्ष बनता है, वैसे ही माता-पिता के संयोग से मनुष्य का जन्म होता है। यह जो जन्म है इसको हम युक्ति से अनुभव कर सकते हैं, क्योंकि इस शरीर को भी हम भोजन से, छादन से, सुविधा से बढ़ाते हैं। रोग, बीमारी, दुःख में इसको घटते हुए देखते हैं, तो बढ़ाने के लिए वैसी ही चीजों का उपयोग कर लेते हैं। बढ़ी हुई के लिए वैसी ही घटाने वाली चीजों का उपयोग कर लेते हैं। यह जो घटने में बढ़ने के, और बढ़ने में घटने के उपाय हैं इनको युक्ति कहा गया है।

हम देखते हैं कि इस संसार में चाहे आप विद्वानों के कथन पर विश्वास करें, अपने अनुभव पर विश्वास करें, अपने अनुमान की बात करें या उसको युक्ति से समझें, सभी तरह से आप एक बात देखेंगे कि यह मनुष्य का जन्म पुराने जन्म की समाप्ति के कारण, जिसे हम मृत्यु कहते हैं, उसके कारण हुआ है। यह बात जब हमारी दृष्टि में अच्छी तरह से आ जाती है तो हमारी बहुत सारी समस्याओं का समाधान हो जाता है। जो लोग इसको स्वीकार नहीं करना चाहते, जिनकी पुनर्जन्म में आस्था नहीं है, चेतना में आस्था नहीं है या आत्मा की सत्ता जिन्हें स्वीकार नहीं हैं उनके लिए आचार्य चरक ने कहा है- **पातकं नास्तिक ग्रह...**। यह पाप है।

क्यों पाप है? इसलिए पाप है कि आप यदि अव्यवस्था को ही आधार मान लें, अकारणता को ही कारण मान लें तो फिर संसार में कुछ भी सिद्ध नहीं कर सकते। चरक के शब्दों में कहें तो- **न परीक्षा न परीक्ष्यं न कर्त्ता कारणं न च, न देवानर्षयः सिद्धाः न कर्म कर्मफलं न च। नास्ति कस्यास्ति नैवात्मा यदृच्छोपहतात्मनः। पातकेभ्यः परं चैतत्पातकं नास्तिक ग्रह।।**

दुनिया में सब पापों से बडा पाप नास्तिक होना है। अर्थात् किसी की सत्ता को, व्यवस्था को, नियम को स्वीकार न करना। नास्तिक का अर्थ ही है-न अस्ति, नहीं मानता मैं। मैं व्यवस्था को नहीं मानता, मैं नियम को नहीं मानता, मैं व्यवस्था को नहीं मानता, नियामक को नहीं मानता। 'नहीं है', ऐसा कहने वाला व्यक्ति नास्तिक है। जो 'अस्ति=है', कहता है वो आस्तिक है। जो 'न अस्ति=नहीं है' कहता है वो नास्तिक है।

नास्तिकों की भी बहुत सारी श्रेणियाँ हैं। उसमें कोई वेद को नहीं मानता, कोई ईश्वर को नहीं मानता, कोई पुनर्जन्म को नहीं मानता, कोई आत्मा को नहीं मानता, कोई किसी को भी नहीं मानता। आचार्य चरक कहते हैं, यदि आप नास्तिक बन गए तो आपके सामने एक संकट होगा कि कोई नियम काम करेगा ही नहीं। संसार में कोई वस्तु नहीं होगी, वस्तु नहीं होगी तो परीक्षा नहीं होगी, परीक्षा नहीं होगी, तो परीक्ष्य नहीं होगा। कोई कार्य नहीं है तो कारण नहीं होगा, कारण नहीं है तो कार्य नहीं होगा। आप किसी को कार्य नहीं कह सकते, किसी को कारण भी नहीं कह सकते। आप किसी को अपना पूर्वज भी नहीं मान सकते, किसी को श्रेष्ठ भी नहीं मान सकते। मैंने जो किया है उसे मैं अच्छा कहूँ, इसका भी कोई अर्थ नहीं है और जो मैंने किया है उसे मैं बुरा कहूँ, इसका भी कोई अर्थ नहीं बनता। न कर्म बनता, न कर्म-फल बनता।

हम एक बार मान लें कि कुछ नहीं है, लेकिन संसार में हमको हमारा अस्तित्व तो मालूम है। हमको दूसरे के सुख-दुःख के बारे में अनुमान करना पड़ता है पर अपने सुख-दुःख के बारे में अनुमान की आवश्यकता नहीं है, वो तो अनुभव है। अपने अनुभव से ही तो दूसरे के लिये अनुमान काम में आता है। हमको पीड़ा होने पर, दुःख होने पर, जैसा अनुभव करते हैं, वैसी स्थिति जब किसी के यहाँ

शेष भाग पृष्ठ संख्या ३७ पर...

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

महर्षि ने क्या उत्तर दिया- कर्त्तव्यनिष्ठ, धर्मनिष्ठ और प्रभु-भक्त बनकर जो भी जीवन बितायेगा वह एक दिन मोक्ष प्राप्त करेगा ही। महर्षि दयानन्द जी से कहा गया कि आप क्यों प्रवृत्ति के बखेड़े में पड़े हो। आप लम्बी समाधि लगाने वाले योगी शीघ्र मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। अब सर्वत्र आपका विरोध होता है।

अपने द्वारा लिखित खोजपूर्ण ऋषि-जीवन के प्रथम पृष्ठ पर श्री हरबिलास शारदा ने इस प्रश्न का उत्तर ऋषि के शब्दों में इस प्रकार दिया है कि मेरे देश के लोग अन्धविश्वासों की बन्धन-कड़ियों में जकड़े हों तो मैं मुक्ति का क्या करूँ? इनकी बन्धन कड़ियाँ कटेंगी तो मेरी स्वतः ही मुक्ति हो जावेगी। ऋषि जी के उत्तर का यह भाव था।

सन् १९६४ में दयानन्द कॉलेज शोलापुर के वार्षिकोत्सव पर भारत के तत्कालीन सर्वोच्च न्यायालय के सर्वोच्च न्यायाधीश जी ने यह प्रसंग सुनाकर अपना व्याख्यान आरम्भ किया था। इन्हीं के पिता को कभी नासिक में महर्षि से शास्त्रार्थ करने को पौराणिक बुलाकर लाये थे। शास्त्रार्थ तो तब हुआ नहीं था। इस घटना का महत्त्व तो प्रत्येक ऋषि जीवनी लेखक व घोर विरोधियों ने भी स्वीकार किया है।

पं. दीनदयाल उपाध्याय आदि कई सनातनी नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी की अन्त बेला में पता करने आये तो महाराज से यह कहते सुने गये, ''स्वामी जी आप ठीक हो जायेंगे।''

स्वामी जी सबको तपाक से यही उत्तर देते रहे, ''नहीं, मैं अब यह चोला बदलकर, नया जन्म लेकर शुद्धि का आन्दोलन आगे बढ़ाना चाहता हूँ। मुझे मुक्ति नहीं चाहिये।''

महात्मा आनन्द स्वामी जी की अन्तिम वेला में यह लेखक उनका सन्देश पाकर जालन्धर उनका पता करने गया तो आपने भी तब स्वास्थ्य के बारे में पूछने पर हमें कहा था, यह चोला अब मेरे काम का नहीं रहा। मैं किसी नई माता की कोख से जन्म लेकर ऋषि-ऋण चुकाऊँगा। वेद का प्रचार करूँगा। इसके कुछ ही दिन के पश्चात् वे चल बसे।

ऐसा नहीं कि पहले आर्यसमाज में श्री स्वामी लक्ष्मणानन्द जी, पं. भगवद्दत्त जी, स्वामी नित्यानन्द जी, महात्मा नारायण स्वामी जी, महात्मा हरिराम जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की कोटि के योगियों के जीवन के आध्यात्मिक प्रसंगों की कहीं चर्चा ही नहीं होती। स्वामी श्रद्धानन्द जी का गढ़वाल के अकाल के समय सिर धड़ से जुदा करने की एक सभा में पूरी तैयारी थी। उन्हें जाने से बहुत रोका गया। वे नहीं रुके। वे भरी सभा में जाकर बैठ गये। उनके तप, तेज के प्रभाव से हत्यारों के मन का सब पाप भाव भस्म हो गया। क्या स्वामी श्रद्धानन्द जी से बड़ा कोई मृत्युञ्जय योगी दिखा सकते हो?

मृत्युदण्ड पाकर भाई परमानन्द सारी रात चैन की नींद सोये। प्रातःकाल यथापूर्व **''वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्''** ऋचा का मधुर गान उनकी कुटी से सुनाई दे रहा था। उनकी भी चर्चा अब कहाँ होती है? इससे व्यक्ति व समाज दोनों की हानि हो रही है।

चौपाल में जाकर सन्देश सुनाना है- पानीपत रोहतक से कर्मठ मिशनरी श्री अभय आर्य जी अपने सहयोगियों यथा श्री अमित जी शास्त्री को लेकर हरियाणा, पंजाब व उ.प्र. के ग्रामों में समय निकालकर चौपाल में जाकर ऋषि का सन्देश सुनाने जाते रहते हैं। जहाँ इतर-आर्यसमाजी भी हमारे पुराने आर्यों के प्रेरक प्रसंग सुनकर सुरुचि से हमें सुनते हैं। चौपाल तक पहुँचने का यही मार्ग है।

राजनैतिक जागृति कब से?- ग्यारह दिसम्बर के दैनिक अंग्रेज़ी ट्रिब्यून में पंजाब कांग्रेस के एक नेता का वक्तव्य छपा बताते हैं कि सन् १९१९ में जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड के समय बापू गाँधी के पंजाब आने से पंजाब में राजनैतिक जागृति आई। इस अनर्थकारी मनगढ़न्त इतिहास के खण्डन में किसी ने कुछ नहीं कहा। कोई पार्टी नहीं बोली, कोई योगी महात्मा नहीं बोला, कोई स्वयंभू इतिहासकार नहीं बोला। अपनी बड़ाई जितनी चाहें राजनीतिक दल कर लें, परन्तु देश पर मनगढ़न्त और कल्पित इतिहास तो न थोपें। लाला लाजपतराय प्रथम

राष्ट्रीय नेता थे जिन्हें सन् १९०७ में माण्डले में निर्वासित किया गया। क्रान्तिवीर अजीतसिंह को भी कहीं निर्वासित किया गया। इससे सारे देश में नवचेतना का संचार हुआ। सूफ़ी अम्बाप्रसाद उस समय विदेशों में मातृभूमि के लिये धक्के खा रहे थे, जब गाँधी जी राजनीति से कोसों दूर थे।

लाला पिण्डीदास, कविवर फ़लक, क्रान्तिकारी आनन्दकिशोर मेहता क्या लाला लाजपतराय के निष्कासन के समय से देश भर में, घर-घर में चर्चित थे या नहीं? सोहनलाल पाठक का बलिदान कब हुआ? मदनलाल ढींगरा क्या पंजाबी नहीं थे? उनके बलिदान के वर्ष का पता तो किया होता। क्या विदेशों में उनके बलिदान से भारत में जन-जागृति की धूम नहीं मची थी? गाँधी जी बहुत बड़े थे, परन्तु उनका गुणकीर्तन करने के लिये इतिहास का कचूमर तो न निकाला जाये।

ज़वाले हैदराबाद- ओवैसी (M.I.M.) मजलिसे इत्तेहादउलमुसलमीन के एकमेव नेता हैं। ज़वाले हैदराबाद इन्हीं की पार्टी का प्रकाशन है। ओवैसी के बाप जी के सामने ही यह विषैली पोथी छपी होगी। हैदराबाद को भारत का अंग बनाने पर इसमें रक्त-रोदन किया गया है। महान् देशद्रोही कासिम रिज़वी और देश के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने वाले निज़ाम का इस पुस्तक में गुणगान है। जिन्नाह की स्तुति, सरदार पटेल की, भारतीय सेना की इसमें जी भरकर निन्दा की गई है। भारत में हैदराबाद के विलय को M.I.M. (मजलिस) पतन मानती है। नेहरू जी की भी इसमें प्रशंसा है। सारे भारत की, क.म. मुंशी की भी घोर निन्दा इसमें मिलेगी।

हम सुनी सुनाई बात नहीं कर रहे। यह पोथी हमारे पास है। हैदराबाद से छपी है। उ.प्र. के मुख्यमन्त्री के एक वक्तव्य पर ओवैसी ने कहा है कि यह देश मेरे बाप का है। ओवैसी की पार्टी, ओवैसी के बाप क्या हैदराबाद को एक स्वतन्त्र इस्लामी राज्य घोषित करके भारत में लहू की नदियाँ बहाने की खुली धमकी नहीं दे रहे थे। कांग्रेस तथा भाजपा ने कभी इस विषैली पुस्तक पर दो शब्द नहीं बोले। हमने एक कठोर सत्य का अनावरण कर दिया है। क्या एक देशद्रोही, देश विरोधी दल के इस सर्वमान्य नेता से देश के राजनीतिक दल अब स्पष्टीकरण मांगेंगे? देशभर में किसी ने भी इस पुस्तक के प्रकाशन को देशद्रोह का कार्य बताकर ओवैसी व इसके दल की पोल न खोली।

देश का एक ही विचारक, सुधारक व नेता है जिसके क्रान्तिकारियों के नाम पत्र मिलते हैं और क्रान्तिकारियों के ऋषि दयानन्द के नाम पत्र मिलते हैं। शाहपुरा में श्री प्रतापसिंह बारहट के स्मारक के लिये ऋषि के पत्र-व्यवहार का परोपकारिणी सभा ने एक सैट भेंट किया। इसमें प्रतापसिंह के पितामह से ऋषि का पत्र-व्यवहार भी है। स्मारक वालों ने यह भेंट स्वीकार तो कर ली, परन्तु स्मारक के सर्वेसर्वा भाजपा बन्धु ने यह पत्र-व्यवहार वहाँ नहीं रखा। क्या यह पत्र-व्यवहार राष्ट्रीय धरोहर नहीं? किस राष्ट्रीय नेता के पत्र-व्यवहार में शहीद राव तुलाराम का नाम है? ऐसा साहस तो महर्षि दयानन्द ही कर सके।

भूल-सुधार-खेद-प्रकाश- इस स्तम्भ के एक अंक में भूलवश हमने यह लिख दिया कि लाहौर में वीर भगतसिंह आदि क्रान्तिकारियों की भूख-हड़ताल के समर्थन में सभा की अध्यक्षता करते हुये हमारे पूजनीय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के भाषण से बौखलाकर गोराशाही ने स्वामी जी को अगले रविवार समाज जाते हुये बन्दी बना लिया। तथ्य यह है कि सत्संग से लौटते हुये उनका ताँगा रोककर उन्हें हथकड़ियाँ पहनाकर बन्दी बनाया गया।

लौहपुरुष ग्रन्थ का नया संस्करण अब प्रकाशनाधीन है। उसमें यह पूरा प्रसंग श्रद्धेय स्वामी सर्वानन्दजी के शब्दों में विस्तारपूर्वक दिया गया है। स्मृतिदोष से इस भूल पर हमें बहुत खेद है।

जागरुकता का परिचय दीजिये- ऋषि जीवन में हमने राधा-स्वामी गुरु श्री शिवव्रतलालजी वर्मन (हजूर जी महाराज) लिखित ऋषि जीवन में चाँदापुर शास्त्रार्थ विषयक उनके बहुत महत्त्वपूर्ण ओजस्वी वाक्य उद्धृत किये हैं। चाँदापुर शास्त्रार्थ पर लिखने वाले हमारे कृपालु विशेषज्ञ न जाने यह नई मौलिक, प्रेरक और विचारोत्तजक सामग्री या प्रमाण कभी उद्धृत क्यों नहीं करते? और कुछ स्वाध्याय प्रेमी सज्जन 'नवयुग की आहट' आदि ऋषि जीवन पाकर हमसे चलभाष पर पूछते रहते हैं, ''क्या यह जीवनी (शिवव्रतलाल जी लिखित) आपने पढ़ी है?''

हम सबको बताते रहते हैं, ''जी हाँ, यह हमारे पास है। हम इसे यदा-कदा देखते रहते हैं।'' हजूर जी ऋषि के समकालीन थे।

राधास्वामियों ने जो कपोल कल्पित कहानी गढ़ ली कि ऋषि जी ने बाबा शिवदयाल जी (इनके संस्थापक) से गुरुमन्त्र लिया- इस मनगढ़न्त कहानी का शिवव्रतलाल जी ने कतई उल्लेख नहीं किया। हमारे इस कथन का भी न जाने आर्यसमाज के ये नये लेखक क्यों उल्लेख नहीं करते।

रोहतक की एक देवी फड़क उठी- श्रीयुत् अंकुर नाम के एक सूझबूझ वाले लगनशील युवक को समाज के वयोवृद्ध प्रधान श्री नन्दलाल जी ने समाज का उपमन्त्री बना दिया है। अंकुर जी ने उपमन्त्री बनते ही अपने युवा साथियों को साथ लेकर समाज में जान फूँक दी है। श्री अभय जी आर्य, श्री अमित शास्त्री जी तथा श्री सुभाष सांगवान व ग्रामीण देवियों ने समाज के दो दिन के कार्यक्रम में सोत्साह सहयोग किया। हम उनके प्रेम के बँधे इस कार्यक्रम में इस सर्दी में वहाँ पहुँचे।

एक ग्रामीण आर्य देवी जी ऋषि मेले पर भी आई थीं, उन्होंने कई प्रश्न पूछे और व्याख्यान में शहीद महात्मा फूलसिंह जी आदि पर भी कुछ बोलने का व उनके प्रेरक प्रसंग सुनाने का अनुरोध किया। हमने भक्त जी पर बोलते हुये नारनौंद में दलितों के लिये आमरण अनशन के समय की एक घटना सुनाई। तब स्वामी वेदानन्द जी महाराज राजस्थान वाले उनकी सेवा के लिये उनके साथ थे। वैसे स्वामी जी का जन्म रोहतक जिले का ही था। यह हमें उनके जीवन काल में तो पता न था।

जब व्रत लम्बा खिंच गया और भक्त जी अपनी माँगों से लेश मात्र भी टलने को तैयार न हुये। चौधरी छोटूराम जी और सेठ जुगलकिशोर दलितों के लिये दो-दो कूएँ बनवाकर उनके जीवन की रक्षा करना चाहते थे, परन्तु भक्त जी अपने व्रत पर अडिग रहे। स्वामी वेदानन्द जी ने हमें एक बार बताया था कि जब यह लग रहा था कि भक्त जी का बलिदान तो होकर रहेगा तो मैंने बड़ी गम्भीर मुद्रा में उनसे पूछा, ''अच्छा! यह तो बतायें कि आपकी अन्तिम इच्छा क्या है ताकि मैं आपके बलिदान होने पर आर्यजाति को आपकी उत्कट इच्छा तो बता सकूँ।''

भक्त जी ने उस घड़ी भावभरित हृदय से कहा, मेरी सबसे बड़ी व अन्तिम इच्छा यही है कि मुझे मेरे सत्गुरु स्वामी श्रद्धानन्द वाली मृत्यु नसीब हो और हुआ भी ऐसा ही। उनके पवित्र हृदय से निकली उनकी मनोकामना ईश्वर ने अक्षरशः पूर्ण कर दी। भक्त जी को भी सायंकाल वेला में क्रूर अन्यायी विधर्मी हत्यारों ने भून दिया। वे दीन, दलित, दरिद्र जातीय बन्धुओं की रक्षा व सेवा में निर्भय होकर अपने प्राण वारकर पं. लेखराम, महाशय राजपाल तथा स्वामी श्रद्धानन्द जी की मण्डली में जाकर बैठ गये।

मेरे मुख से ये शब्द सुनकर श्रोताओं ने करतल ध्वनि से हर्षनाद किया। वह आर्य देवी जिसके अनुरोध पर यह प्रसंग सुनाया, वह तो इसे सुनकर फड़क उठी। मैंने तब वहाँ यह भी बताया कि यह घटना केवल मेरी पुस्तकों व लेखों में ही मिलेगी।

श्रद्धेय स्वामी वेदानन्द जी ने अपने संस्मरण सुनाते हुये भावविभोर होकर मुझे भक्त जी के जीवन की यह सबसे मूल्यवान् व स्वर्णिम घटना सुनाई। इसे सुनकर उस दिन मैंने अपने आप को धन्य-धन्य माना और आज मेरे मुख से यह प्रसंग सुनकर आर्यजन क्या देवियाँ, क्या पुरुष तथा कुमार और युवक इस प्रेरक प्रसंग को श्रवण कर अपने आपको धन्य-धन्य जानते व मानते हैं। आओ! उनका स्मरण करके हम सस्वर मिलकर गायें-

कौन है जो आर्यों के वलवले दबा सके।
कौन हमें छुरे तीर तोप से डरा सके।।
बार-बार जान वेद-ज्ञान पर लुटायेंगे।
विश्व को सन्देश दयानन्द का सुनायेंगे।।

वेद सदन, नई सूर्यनगरी, अबोहर, पंजाब

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३

पं. लेखराम के ग्रन्थ संग्रह

'कुल्लियाते आर्यमुसाफिर' का प्रथम भाग प्रकाशित

दूसरे भाग का प्रकाशन कार्य प्रगति पर

पं. लेखराम आर्यमुसाफिर का ग्रन्थ संग्रह ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' जो कि एक दुर्लभ ग्रन्थ बन चुका था, परोपकारिणी सभा ने उसे पुन: प्रकाशित करने का संकल्प लिया। जिसका सुखद परिणाम यह है कि इस अमूल्य निधि का प्रथम खण्ड महर्षि दयानन्द सरस्वती के १३५ वें बलिदान दिवस के अवसर पर छपकर तैयार हो चुका है। दूसरा भाग कुछ ही समय उपरान्त सुधी आर्यजनों को उपलब्ध होगा। इस ग्रन्थ के सम्पादन के गुरुतर कार्य में आर्यसमाज के ज्ञानवृद्ध विद्वान् व परोपकारिणी सभा के सम्मानित उपप्रधान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु ने जो महनीय परिश्रम किया है, उससे इस ग्रन्थ की महत्ता में और अधिक वृद्धि हुई है। सभा उनका हृदय से आभार व्यक्त करती है। साथ ही जिन महानुभावों ने इस कार्य में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया, उनका भी सभा धन्यवाद ज्ञापित करती है। सहयोगी जनों के नाम ग्रन्थ में प्रकाशित भी किये गये हैं।

अब जबकि दूसरा भाग छपने के लिये तैयार है, ऐसे में आर्यजन अपने सहयोग से इस ज्ञानयज्ञ को सम्पन्न करेंगे, ऐसी आशा है। **- मन्त्री**

परोपकारी के पाठकों से निवेदन

प्रिय पाठकगण, सादर नमस्ते!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आपकी प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं ताकि युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के लोकोपकारी एवं धार्मिक सन्देश जन-जन तक पहुँच सकें तथा उन कल्याणकारी विचारों को पढ़कर प्रत्येक पाठक सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं वैदिक विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे।

सज्जनो, हम इस पत्रिका की लाभ-हानि की बात नहीं कर रहे। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि पैसा भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रुका रहता है, पुनरपि उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अत: ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप महानुभाव वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता, रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर, शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

मनुष्यों को चाहिये कि पुरुषार्थ से विद्या का सम्पादन, विधिपूर्वक अन्न और जल का सेवन, शरीरों को नीरोग और मन को धर्म में निवेश करके सदा सुख की उन्नति करें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.१४**

देह ब्रह्माण्ड का नक़्शा है

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती

वैचारिक स्वतन्त्रता मनुष्य का स्वभाव है और अधिकार भी। दुनिया के मत-पन्थ विचारों के प्रकट करने पर तो रोक लगा सकते हैं, पर विचारों पर नहीं। वैदिक-ज्ञान परम्परा की विशालता का कारण यही है कि उसने चिन्तन की सीमाएँ नहीं बाँधीं और अगर विचार दर्शन की पगडंडी पर हों तो दायरा और बड़ा हो जाता है। दयानन्द ने ना तो अपने विचारों को कभी पंगु बनने दिया और ना ही अपने शिष्यों को ये सीख दी। इसीलिये स्वामी दर्शनानन्द जैसे प्राज्ञ पुरुष का लेख हमारे सामने है। - सम्पादक

यदि ध्यानपूर्वक विचार करें तो संसार की सम्पूर्ण वस्तुएँ तीन के अन्तर्गत समाविष्ट हो जाती हैं। प्रथम वह जिसे सुख-दु:ख अनुभव होता है, दूसरा वह जो सुख का कारण है और तीसरा वह जो दु:ख का कारण है, क्योंकि सुख और दु:ख दो विरोधी गुण हैं, अत: वे दोनों एक ही गुणी में नहीं रह सकते, इसलिए यदि सुख और दु:ख अनुभव करने वाले जीवात्मा का गुण सुख माना जावे तो सुख का नाश किसी दशा में नहीं हो सकता जिस समय तक कि जीवात्मा का नाश न हो।

यहाँ प्रतिपक्षी प्रश्न करता है कि जिस प्रकार जल का गुण शीतलता है, परन्तु अग्नि के सम्पर्क से जल उष्णता को प्राप्त हो जाता है, इसी प्रकार जीवात्मा स्वयं सुखस्वरूप है, परन्तु माया के सम्पर्क से दु:खी हो जाता है। जिस प्रकार अग्नि की उष्णता जल की शीतलता को ढक लेती है, इसी प्रकार माया की परतन्त्रता जो दु:खस्वरूप है जीवात्मा के आनन्द को ढक लेती है, जिससे जीव अपने को दु:खी अनुभव करता है। प्रतिपक्षी का यह दृष्टान्त सर्वथा मिथ्या है, क्योंकि आवरण दो द्रव्यों के बीच में होता है, गुण और गुणी के बीच में नहीं आता। उदाहरणार्थ जल एक द्रव्य है जिसका गुण शीतलता है और त्वचा एक दूसरा द्रव्य है जिससे शीतलता तथा उष्णता का ज्ञान होता है। ऐसी दशा में अग्नि का आवरण त्वचा और जल के बीच में हो सकता है, परन्तु जब सुख द्रव्य नहीं वरन् जीव का गुण है तो जीव और सुख के बीच में माया का आवरण आना असम्भव है। दूसरे सूक्ष्म पदार्थ का नैमित्तिक गुण स्थूल पदार्थ में आया करता है, अग्नि जल से सूक्ष्म है, अत: अग्नि की उष्णता जल में प्रतीत होती है, परन्तु माया अर्थात् प्रकृति जीव की अपेक्षा स्थूल है, अत: न तो वह जीव में आ सकती है और ना ही जीव और सुख के बीच में आवरण हो सकती है। सुतरां जीवात्मा स्वयं सुखरहित है और प्रकृति परतन्त्र अर्थात् दु:खस्वरूप है और परमात्मा सुखस्वरूप है। जब जीव प्रकृति की उपासना करता है, जैसा कि जाग्रदवस्था में नित्य देखता है तभी अपने को दु:खी पाता है और जब परमात्मा की उपासना करता है तब सुख का अनुभव करता है, जैसा कि समाधि, सुषुप्ति और मुक्ति अवस्था में होता है। प्रकृति के बने हुए दो शरीर हैं जो स्थूल और सूक्ष्म शरीर के नाम से प्रसिद्ध हैं, तीसरी प्रकृति स्वयं कारणशरीर कहाती है। इन तीनों शरीरों के भीतर दो पुरुष अर्थात् जीव और ब्रह्म रहते हैं। यह सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म का निवास-स्थान है और यह शरीर जो जगत् का नक़्शा=मानचित्र है, जीव के काम करने का स्थान है। जिस प्रकार जीव इस सम्पूर्ण शरीर को नियमपूर्वक चलाता है, उसी प्रकार ब्रह्म समस्त संसार को चलाता है। जितनी विद्याएँ जगत् में हैं वे सम्पूर्ण इस शरीर में सूक्ष्मरूप से हैं। इसी कारण योगी समाधि द्वारा इस शरीर के भीतर सब विद्याओं को देखता है। महर्षि कपिलजी ने इस नक़्शे को इस सूत्र में दिखाया है-

सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः प्रकृतेर्महान्, महतोऽहंकारोऽहंकारात् पञ्चतन्मात्राण्युभयमिन्द्रियं पञ्चतन्मात्रेभ्यः स्थूलभूतानि पुरुष इति पंचविंशतिर्गणाः।। सां. १/६१

अर्थ- सत् अर्थात् प्रकाशस्वरूप अर्थात् अग्नि, रज जो न प्रकाश करे और न ढाँपे अर्थात् जल, वायु, आकाश, काल और दिशा और तम जो ढाँपे अर्थात् पृथिवी। इन

सबकी कारण-दशा को प्रकृति अर्थात् कारणशरीर कहते हैं। उस दशा का नाम प्रकृति इसलिए है कि कारण अवस्था में उनमें विरोध प्रतीत नहीं होता, केवल मिश्रित अवस्था में वे एक-दूसरे के नाशक होते हैं। जिस प्रकार अब पृथिवी प्रकाश को ढाँपती है, वैसी परमाणु-दशा में नहीं होती। उस कारणरूप प्रकृति से स्थूल महत्तत्त्व अर्थात् मन बनता है। बहुत-से मनुष्य महत्तत्व का अर्थ बुद्धि करते हैं, परन्तु यह सर्वथा असत्य है, क्योंकि महत्तत्त्व द्रव्य है और बुद्धि गुण है। महत्तत्त्व का अर्थ बुद्धि करने से शास्त्रों में विरोध पैदा करने के अतिरिक्त सांख्य की व्यवस्था भी ठीक नहीं हो सकती, क्योंकि सांख्यकार स्वयं महत् का अर्थ मन करते हैं-

''**महदाख्यमाद्यं कार्य्यं तन्मनः**''।। -सां. १/७१

अर्थ- ''महत् या प्रकृति का पहला कार्य मन है।'' यद्यपि विज्ञानभिक्षु आदि ने यहाँ भी मन का अर्थ बुद्धि ही किया है जो कदापि सत्य नहीं हो सकता, क्योंकि बुद्धि गुण है, वह प्रकृति का कार्य नहीं हो सकती। प्रकृति का कार्य द्रव्य होगा और मन द्रव्य है, अतः मन का अर्थ खेंचतान कर बुद्धि करना यथार्थ नहीं। बहुत-से मनुष्य कहेंगे कि यद्यपि न्याय और वैशेषिक शास्त्र की परिभाषा में बुद्धि गुण है, तथापि कपिल मुनि ने उसे द्रव्य माना हो तो आप क्या कहोगे? ऐसा कहने वाले सांख्यशास्त्र से नितान्त अनभिज्ञ हैं, क्योंकि सांख्य में भी बुद्धि को गुण बताया है-

अध्यवसायो बुद्धिः।। -सां. २/१३

अर्थ- ''अर्थात् निश्चयात्मक ज्ञान का नाम बुद्धि है।''

बुद्धि को द्रव्य मानने से सांख्यशास्त्र की सम्पूर्ण व्यवस्था ही बिगड़ जाती है, इस तथ्य को पूर्णरूप से यहाँ नहीं दिखा सकते, क्योंकि पचासों सूत्रों में गड़बड़ मचेगी, परन्तु थोड़ा आगे वर्णन करेंगे। मन से अहङ्कार उत्पन्न हुआ और अहङ्कार से पाँच तन्मात्रा अर्थात् रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द, इन गुणों के गुणी पृथक् हो गये और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ, ये सब सत्रह मिलकर अर्थात् मन, अहङ्कार, पाँच तन्मात्रा और दस इन्द्रियाँ-सूक्ष्म शरीर अथवा लिङ्ग शरीर कहाता है।

यदि बुद्धि को द्रव्य मानकर लिङ्गशरीर में सम्मिलित किया जाए तो लिङ्गशरीर सत्रह के बजाय अठारह का हो जाएगा, परन्तु १८ तत्त्वों=द्रव्यों से बने हुए का नाम लिङ्गशरीर किसी आचार्य ने नहीं माना और कपिल मुनि के तो सर्वथा विरुद्ध है, क्योंकि उन्होंने स्वयं लिखा है-

सप्तदशैकं लिङ्गम्।। -सां. ३/९

अर्थ- ''सत्रह द्रव्यों के संघात से बने हुए का नाम लिंगशरीर है।'' आर्य लोग कहेंगे कि जब 'सत्यार्थप्रकाश' में भी महत् का अर्थ बुद्धि किया है तो तुम्हारी बात को कैसे मान लेवें? ऐसे आर्यपुरुष वही होंगे जिन्होंने ऋषि दयानन्द की पुस्तकों के सम्बन्ध में खोज नहीं की। स्वामी दयानन्द की पुस्तकों में भीमसेन आदि पण्डितों की कृपा से जितनी अशुद्धियाँ हुई हैं, उन्हें ऋषि दयानन्द ने छपी हुई दशा में देखा भी नहीं। पहला 'सत्यार्थप्रकाश' जो स्वामीजी के जीवनकाल में छपा उसमें बहुत-कुछ गड़बड़ हुई जिसकी विज्ञप्ति उन्होंने स्वयं यजुर्वेदभाष्य के प्रथम अङ्क में छाप दी थी और दूसरी बार सत्यार्थप्रकाश के प्रेस से निकलने के बहुत दिन पूर्व स्वामीजी का परलोकगमन हो चुका था, इसलिए उनका अशुद्धिपत्र वह न बना सके। पण्डितजनों ने शास्त्रों को विचारा नहीं था, अतः उन्होंने सूत्रों का अनुवाद वैसा ही कर दिया जैसा कि प्राचीन टीकाओं में लिखा हुआ था। स्वामीजी के विचारों को जानने वाला मनुष्य यह कभी नहीं मान सकता कि स्वामी दयानन्द जीव और ब्रह्म को एक मानने वाले हों, परन्तु इस सूत्र के अनुवाद से एक ही सिद्ध होते हैं, जैसाकि लिखा है 'पचीसवाँ पुरुष अर्थात् जीव और परमेश्वर है', क्योंकि सांख्य ने पच्चीस पदार्थ माने हैं, उनमें से एक प्रकृति कारण शरीर, सत्रह तत्त्वों का लिंग शरीर, पाँच भूतों का स्थूलशरीर, ये सब मिलकर २३ होते हैं। हाँ, पुरुष में जीव और ब्रह्म लेने से पूरे पच्चीस हो जाते हैं, परन्तु बुद्धि को जोड़ने से छब्बीस हो जाते हैं, अन्यथा जीव और ब्रह्म को एक पदार्थ मानना पड़ता है। बहुत-से मनुष्य कहेंगे कि 'पुरुष' शब्द एकवचन में क्यों आया है? इसका समाधान यह है कि पुरुष शब्द के दो अर्थ हैं-एक जीव, दूसरा ब्रह्म। जीव और ब्रह्म एक जाति के नहीं, जिनको द्विवचन लिखते, वरन् जब पुरुष का अर्थ जीव किया तब वह जाति

को ध्यान में रखते हुए एक ही हैं और जब ब्रह्म किया तो वह स्वरूप से एक था, अतः दोनों के लिए एकवचन ही उचित था। यदि महर्षि कपिल एक ही पुरुष मानने वाले होते तो वह पुरुष को बहुत न मानते, जैसा कि उन्होंने लिखा है-

जन्मादिव्यवस्थातः पुरुषबहुत्वम्।।- सां. १/१४९

अर्थ- कोई पुरुष जन्म ले रहा है, कोई मर रहा है, कोई दुःख भोग रहा है, कोई सुख, कोई बन्धन में फँसा हुआ है और कोई मुक्त। इसलिए पुरुष अर्थात् जीव बहुत हैं।

बहुत-से मनुष्य कहते हैं कि जीव और ब्रह्म को यदि जाति से एकवचन मान लें तो क्या हानि है? इसका उत्तर यह है कि प्रथम तो ब्रह्म में जाति का प्रयोग नहीं हो सकता, क्योंकि जाति बहुत वस्तुओं में रहा करती है, एक में नहीं। ब्रह्म एक है। फिर जब ब्रह्म और जीव भिन्न-भिन्न गुणवाले हैं तो उन्हें एक जाति किस प्रकार कह सकते हैं? शास्त्रों के टीकाकारों की यह दशा है कि एक चूक जावे तो सब चूकते चले जाते हैं, उसकी चूक को सुधारते नहीं। इस अशुद्धि के जन्मदाता सांख्य-तत्त्व कौमुदीकार थे, जिसने कि उस श्रुति का पाठ जिससे तीन अनादि पदार्थ सिद्ध होते हैं बदलकर ऐसा कर दिया जिससे पुरुष और प्रकृति दो ही अनादि सिद्ध हों और इसीलिए उसे ब्रह्म के स्थान पर एक और उत्पन्न हुआ पदार्थ बुद्धि जोड़ना पड़ा। उसी की कृपा से बहुधा मनुष्य महर्षि कपिल को नास्तिक बताते थे। विज्ञानभिक्षु आदि समस्त टीकाकारों ने उसका अनुकरण किया और जहाँ कोई ऐसा वाक्य मिला जिससे इनका अर्थ अशुद्ध दीखे, उस पद का अर्थ भी बदल दिया। यद्यपि सूत्रकार ने स्पष्टतया प्रकृति का प्रथम कार्य महत् अर्थात् मन बताया था, परन्तु विज्ञानभिक्षु ने मन का अर्थ भी बुद्धि कर दिया। क्या सूत्रकार को बुद्धि शब्द लिखना नहीं आता था कि वह बुद्धि के स्थान पर मन लिखते? सूत्रकार तो बुद्धि को द्रव्य नहीं मानते, वरन् गुण बताते थे, परन्तु प्रकृति का कार्य होने से बुद्धि द्रव्य होती, अतः उन्होंने मन जो द्रव्य है, उसे स्पष्टतया कहा, परन्तु किसी ने नास्तिकपन से बुद्धि को द्रव्य बताकर ब्रह्म को उड़ाया और अन्य गूढ़ विचार न करनेवालों ने उन्हीं का अनुकरण किया। यहाँ तक कि स्वामी हरिप्रसाद ने जो 'वैदिक वृत्ति' नाम से एक टीका लिखी है, उसमें भी इन परम्परा से चली आनेवाली अशुद्धियों का कोई विचार नहीं किया। हमारी समझ में जब तक आगे-पीछे के सूत्रों की व्यवस्था ठीक न कर ली जाए तब तक किसी को शास्त्रों की वृत्ति लिखने का अधिकार नहीं। हमने तो स्वामीजी महाराज का नाम और उसके साथ उनकी उपाधि देखकर ही इस वृत्ति की अवस्था को समझ लिया था, क्योंकि उन्हें वह समाधि किसी सभा-सोसाइटी की ओर से मिली हुई नहीं। वास्तव में इस सूत्र में ऋषि ने तीन शरीर जो प्रकृति की दशा हैं और दो पुरुष बताकर इस देह को ब्रह्माण्ड का मानचित्र बताया है। प्रकृति का कारण शरीर, मन, अहंकार, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द और इनके साधन नेत्र, नासिका, कर्ण, रसना और त्वचा पाँच ज्ञानेन्द्रिय तथा हाथ, पाँव, जिह्वा, उपस्थ और गुदा-पाँच कर्मेन्द्रिय-यह सब सत्रह वस्तु मिलकर 'लिङ्गशरीर' कहा जाता है। पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश यह स्थूलशरीर, देह में रहने वाला जीव है और समस्त ब्रह्माण्ड के शरीर में रहने वाला ईश्वर है। यद्यपि इस अवसर पर और भी विशेष लिखने की आवश्यकता थी, परन्तु यह पुस्तक छोटी और विचार अधिक होने के कारण संक्षेप से ही वर्णन किया गया है। इस न्यूनता को हमारे पाठकगण स्वयं विचारकर पूरा कर लें अथवा हमें यदि कभी अवसर मिला तो बड़ी पुस्तक के रूप में उपस्थित करेंगे।

साभार - स्वामी दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह

परमेश्वर सगुण व निर्गुण है

परमेश्वर सगुण व निर्गुण दोनों प्रकार है। जो गुणों से सहित वह सगुण और जो गुणों से रहित वह निर्गुण कहाता है। अपने-अपने स्वाभाविक गुणों से सहित और दूसरे विरोधी के गुणों से रहित होने से सब पदार्थ सगुण और निर्गुण है, कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जिसमें केवल निर्गुणता व केवल सगुणता हो। किन्तु एक ही में सगुणता और निर्गुणता सदा रहती है। वैसे ही परमेश्वर अपने अनन्त ज्ञान, बलादि गुणोंसे सहित होने से सगुण और रूपादि जड़ के तथा द्वेषादि जीव के गुणों से पृथक् होने से निर्गुण कहाता है। **(स.प्र.स.७)**

संसार के पाँच आध्यात्मिक शत्रु

पं. बुद्धदेव विद्यालङ्कार

जीवनभर की कुल-जमा सम्पत्ति भी अनुभव खरीदने में अपर्याप्त दिखाई पड़ती है। ये अनुभव तो ठोकर खाकर ही मिलते हैं। मगर सावधान! जीवन में लगी हर ठोकर सही सीख दे जाये, ये जरूरी नहीं, पतन का रास्ता भी वहीं से निकलता है। सात्त्विक वृत्ति और निस्वार्थ, लोकहितैषी ऋषियों की दृष्टि ऐसे में वरदान बनकर आती है। शास्त्र, सदुद्देश्य और अनुभव-ये तीनों एक साथ मिलने दुर्लभ हैं। लेकिन अगर मिल जायें तो एक पुरुष का जन्म होता है। उस आप्त के मुख, लेखनी से निकले वाक्य समुद्र मन्थन से निकले अमृत से किसी भी तरह कमतर नहीं होते। कहते हैं उस अमृत की कुछ बून्दें छलक गईं थीं, नीचे लिखी पंक्तियाँ उन्हीं बून्दों का अंश है, जो कि पं. बुद्धदेव विद्यालङ्कार के 'कायाकल्प' ग्रन्थ का एक अध्याय है। अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। -सम्पादक

संसार के पाँच आध्यात्मिक शत्रु हैं-

(क) अज्ञान (ख) स्वार्थ (ग) विक्रोश (घ) आलस्य (ङ) अभाव।

इनमें से प्रत्येक को एक-एक करके लेता हूँ।

(क) अज्ञान- भगवान वेदव्यास ने गीता में कहा है-

''नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।''

अर्थात् ''ज्ञान के सदृश पवित्र वस्तु संसार में दूसरी नहीं है।'' इससे स्पष्ट है कि अज्ञान के समान अपवित्र वस्तु भी दूसरी नहीं है। मैं अज्ञान को सबसे बड़ा शत्रु इसलिये कहता हूँ कि यह संसार के हितैषियों के हाथ से भी संसार का अहित करवा डालता है। जो लोग स्वभाव से दुष्ट हैं, जिन्हें पर-पीड़ा में निष्कारण आनन्द आता है अथवा जो स्वार्थवश दूसरों के हित का नाश करते हैं, उनके हाथों संसार का अनिष्ट होना तो बिल्कुल स्वाभाविक ही है। किन्तु अज्ञान से तो हित चाहने वाले भी, अपनी समझ में हित करते हैं ऐसा समझते हुए भी, अहित कर बैठते हैं अथवा समस्या उपस्थित होने पर किंकर्त्तव्य-विमूढ़ होकर विवश हो बैठे रहते हैं। जिन मनुष्यों ने सत्य का प्रकाश करने वाले विज्ञानवेत्ताओं को धमकाया, सताया और जीते-जी जला तक दिया, वे अपनी समझ में संसार का और स्वयं विज्ञानवेत्ताओं का-दोनों का हित ही साध रहे थे। जब तक रेलगाड़ी तथा व्योमयान का अविष्कार न हुआ था, मनुष्य दूर देशस्थित मनुष्यों का हित चाहते हुए भी विवश थे। इस सारे दु:ख का कारण था अज्ञान।

मनुष्य को केवल विचारों के प्रकाश मात्र के लिए दण्ड नहीं देना चाहिए। क्योंकि न जाने जिन विचारों को हम आज सर्वथा सत्य समझते हैं, कल उनमें कुछ परिवर्तन हो जाय। यह विचार-स्वातन्त्र्य की भावना कोई गहरा सत्य नहीं है। किन्तु इतने से सत्य के यथार्थ ज्ञान के न होने से कितने पूजा के योग्य महापुरुषों को बलिदान किया, जब इस पर विचार करते हैं तो आश्चर्य होता है। डेगची से ढक्कन उछलते किसने नहीं देखा? किन्तु इतनी-सी बात के पूर्ण परिणाम क्या हैं, इसी बात के ज्ञान ने मानव-जाति के इतिहास में कैसा विशाल परिवर्तन कर डाला है जब यह विचारते हैं तो यह कहना पड़ता है, कि तिनके की ओट पहाड़ छिपा पड़ा था। इसीलिए चरक महाराज के स्वर में स्वर मिलाकर कहना पड़ता है कि ''**प्रज्ञापराधो मूलं सर्वरोगाणाम्**'' अर्थात् ''**समझ का दोष सब रोगों की जड़ है।**''

इस समय मानव जाति के सङ्गठन के सम्बन्ध में जो अज्ञान फैला हुआ है, आज तक साधारण सी सामाजिक उन्नति की बातों को लोक-व्यवहार तक पहुँचाने में जितना श्रम का व्यय हुआ है और जितना अभी तक शेष है, उसे देखकर तो और भी आश्चर्य होता है। जो साधारण-सी भूलें हम एक छोटे से परिवार के सम्बन्ध में होना सहन नहीं कर सकते, वे ही सारे मानव समाज को दु:ख दे रही हैं, यह देखकर किसे आश्चर्य न होगा? सच तो यह है कि

मानव-समाज के कायाकल्प के लिए जो उपाय मैं लिखने लगा हूँ वह इतने सरल और लोक विदित हैं कि उन्हें लिखते समय लज्जा अनुभव होती है। किन्तु जब यह देखता हूँ कि इन साधारण से मनोवैज्ञानिक तथ्यों के ठीक प्रयोग न होने से संसार में कितना दु:ख बढ़ रहा है, तो प्रेम लज्जा और संकोच पर विजय पा ही लेता है।

(ख) **स्वार्थ**- संसार का दूसरा शत्रु स्वार्थ अथवा तृष्णा है। यों तो महात्माओं को छोड़कर साधारण मनुष्य मात्र स्वार्थ और प्रेम के मेल का परिणाम है। किन्तु कई मनुष्यों में यह स्वार्थ असाधारण मात्रा में पाया जाता है। भर्तृहरि जी ने मानव समाज के बड़े सुन्दर विभाग किये हैं। वे लिखते हैं-

एके ते पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं विनिघ्नन्ति ये
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे।।

अर्थात् इस संसार में चार प्रकार के मनुष्य हैं-

(१) ''वे महात्मा लोग जो अपने स्वार्थ का त्याग करके दूसरों का हित करते हैं।''

(२) ''वे लोग जो यदि उनके स्वार्थ को हानि न पहुँचती हो, तो यथाशक्ति परोपकार भी करते हैं। संसार में सबसे अधिक संख्या इन्हीं लोगों की है।''

(३) ''वे लोग जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरों के स्वार्थ का नाश करते हैं।''

(४) ''वे लोग जो ठीक उसी प्रकार निष्काम भाव से दूसरों की हानि करते हैं, जिस प्रकार निष्काम भाव से महात्मा लोग दूसरों का हित करते हैं। भर्तृहरि जी कहते हैं कि इनका क्या नाम धरूं, सो समझ नहीं आता।''

सो स्वार्थ मनुष्य को राक्षस बना देता है। यह काम, लोभ, मोह और अभिमान के रूप में प्रकट होता है, जिनमें से काम और लोभ मुख्य हैं।

(ग) **विक्रोश**- मनुष्य जाति का तीसरा शत्रु विक्रोश है। यह वह दुर्गुण है जिसके कारण वे मनुष्य उत्पन्न होते हैं, जिन्हें भर्तृहरि जी ने चौथी श्रेणी में रखा है। कई मनुष्यों में दूसरों के दु:ख में आनन्द लेने की स्वाभाविक दुष्प्रवृत्ति होती है, वह काम, क्रोध, लोभ आदि किसी भी कारण से नहीं, किन्तु निष्कारण, दूसरों को पीड़ा देते हैं। उनके हृदय में जो स्वाभाविक विध्वंसकारिणी प्रवृत्ति होती है, उसे हमने अनुक्रोश के उलटे विक्रोश का नाम दिया है।

वस्तुत: देखा जाये तो स्वार्थ और विक्रोश का मूल भी अज्ञान है। यदि इन मनुष्यों को अपने कर्मों के फल का पूर्ण रूपेण ज्ञान हो जाये, तो ये ऐसा कभी न करें। **पूर्ण ज्ञान से हमारा तात्पर्य है कि उन्हें साक्षात्कार हो जाये। क्योंकि उपदेश-मात्र से ज्ञान तो सबको मिल ही जाता है।**

(घ) **आलस्य**- मानव समाज का चौथा शत्रु आलस्य है। इसे हमने स्वार्थ तथा विक्रोश से अलग इसलिए रखा है, क्योंकि यह बहुधा धर्मात्मा मनुष्यों में भी पाया जाता है। यह वही वस्तु है जिसे गीता में-

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्व देहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।।

गीता १४/८

(अज्ञान से तम उत्पन्न होता है, जो सब प्राणि-मात्र को मूढ़ बना देता है। यह तमोगुण प्राणियों को प्रमाद, आलस्य और निद्रा के बन्धनों से बाँधता है।) के नाम से याद किया है। बहुत-से मनुष्य ऐसे पाए जाते हैं, जो संचित धन में से सहस्रों दान करते हैं, परन्तु स्वयं कुछ कार्य नहीं करते। उनमें पराए दु:ख में समवेदना पाई जाती है। वे दान भी करते हैं इसलिए उन्हें स्वार्थी कैसे कहें? वे किसी को दु:ख भी जहाँ तक बन पड़ता है, नहीं देते, परन्तु स्वयं करते कुछ नहीं। इनका दोष आलस्य है। संसार में किसी को दु:ख ''न देना'' इतने मात्र से मानव-जाति का कल्याण नहीं हो सकता। प्रत्येक मनुष्य को कुछ न कुछ ''देना'' चाहिए। किन्तु भारतवर्ष में तो बहुत से धार्मिक सम्प्रदाय तक ऐसे हैं, जो दु:ख न देना मात्र में धर्म की इति श्री समझते हैं। उनका कहना है कि-

अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गए सबके दाता राम।।

ऐसे मनुष्य सचमुच अजगर की तरह चुपचाप पड़े रहते हैं। अजगर तो किसी को दु:ख भी देता है, परन्तु वे किसी को दु:ख नहीं देते। किन्तु ऐसे मनुष्यों से भी मानव-समाज का हित नहीं हो सकता। इसलिये हमने आलस्य

को मानव-समाज का चौथा शत्रु माना है।

वेद में इस पुरुषार्थ की क्रिया को सवन (extraction) के नाम से पुकारा गया है अर्थात् हरएक मनुष्य का धर्म है कि वह किसी-न-किसी पदार्थ में से सार को खींच निकाले। किसान बीज को साधन बनाकर धरती में से अन्न सवन करता है। बढ़ई अपने यन्त्रों से लकड़ी में से उपकरणों का सवन करता है। रसायन-शास्त्र का विद्वान् पदार्थों में से उनके परस्पर सम्बन्ध की विद्या के तत्त्वों को सवन करता है और फिर वे सब इन सवनों के परिणाम सोमों को भगवान् की भेंट करते हैं। जो सवन नहीं करते, वे प्रभु के प्यारे नहीं हैं। वेद में कहा है-

''यः सुन्वतः सखा तस्मा इन्द्राय गायत''

(ऋग्वेद १/४/१०)

अर्थात् ''जो सवन करने वालों का सखा है, उस इन्द्र के (परमात्मा वा राजा के) गीत गाओ।''

इसी प्रकार ऋग्वेद दशम मण्डल सूत्र में लिखा है-

श्रमस्य दायां विभजन्त्येभ्यः।

अर्थात् मनुष्य समाज के नेता, मनुष्यों को उनके श्रम का फल बाँटते हैं।

सो आलस्य सवन का उलटा है। यह भी मानव-जाति का महाशत्रु है।

(ङ) अभाव- मानव-जाति का पाँचवाँ शत्रु अभाव है। वस्तुतः सोचें तो इसका भी मूल अज्ञान है। किन्तु इसको हमने अन्य शत्रुओं से पृथक् इसलिए रखा है कि यह उन मनुष्यों से भी पाप करवाता है, जो स्वभाव से दुष्ट अथवा आलसी नहीं हैं। उदाहरण के लिए किसी देश में दुर्भिक्ष आ पड़े, तो वहाँ अच्छे पुरुषों को भी अपना-आप सम्भालना कठिन हो जाता है। किसी ने क्या अच्छा कहा है-

बुभुक्षितः किन्न करोति पापम्।
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति।।

अर्थात् ''भूखा आदमी कौन-सा पाप नहीं कर डालता? भूखे लोग निर्दय हुआ करते हैं।''

यह अभाव दो कारणों से उत्पन्न होता है-

(१) उपभोग्य वस्तुओं के ह्रास से, और

(२) उपभोक्ताओं की अति वृद्धि से।

ज्ञानी मनुष्य इन दोनों विपत्तियों का उपाय पहिले से सोचकर इनका प्रतिकार करते हैं। इसीलिए हम कहते हैं कि **मानव-जाति का सबसे बड़ा शत्रु अज्ञान है।**

साभार - कायाकल्प

प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ है।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की विशेष व्यवस्था है।

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक की शास्त्री, आचार्य परीक्षा की तैयारी भी इस पाठ्यक्रम के माध्यम से हो जाती है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की निःशुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य विद्यादेव

आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान

पुष्कर रोड, अजमेर।

९८७९५८७७५६

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)-प्रथम खण्ड

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ४५०/- **पृष्ठ**- ४०८

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अवैदिक मान्यताओं के खण्डन एवं वैदिक विचारधारा की प्रतिष्ठा के लिये लेखन और उपदेश दोनों ही विधाओं का भरपूर उपयोग किया। उनके बलिदान के पश्चात् उनके जिन शिष्यों ने इस कार्य को गति दी, उनमें पण्डित लेखराम का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। पण्डित जी की उपस्थिति का आभास मात्र ही विरोधियों के अन्तस् को कँपाने के लिये पर्याप्त होता था। उस मनीषी के मौखिक उपदेश तो संग्रहित नहीं हो पाये, परन्तु उनकी धारदार लेखनी से निकले वाक्य हमारे पास आज भी विद्यमान हैं, जिन्हें ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' के नाम से जाना जाता है। परोपकारिणी सभा द्वारा इसका यह प्रथम खण्ड प्रकाशित किया गया है। दूसरा प्रकाशनाधीन है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जो कि कई भाषाओं के ज्ञाता हैं, उन्होंने इसका कुशल सम्पादन किया है।

२. अष्टाध्यायी भाष्य- भाग २

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रुपये **पृष्ठ**- ४१४

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक सिद्धान्तों, कर्मकाण्ड, वेदभाष्य आदि के साथ-साथ संस्कृत व्याकरण पर भी पर्याप्त साहित्य का निर्माण किया है। १४ खण्डों में प्रकाशित वेदांग-प्रकाश के साथ-साथ अष्टाध्यायी ग्रन्थ के चार अध्यायों तक का भाष्य भी किया। यह भाष्य तीन खण्डों में परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित किया गया, परन्तु इसका द्वितीय भाग समाप्त होने से यह अपूर्ण हो गया था। अब इसका दूसरा भाग भी छप चुका है, जिससे यह सम्पूर्ण रूप में व्याकरण के अध्येताओं को सुलभ हो गया है।

३. संस्कृत वाक्य प्रबोध

लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- ५०रुपये **पृष्ठ**- ११६

स्वामी दयानन्द सरस्वती संस्कृत को व्यावहारिक भाषा बनाना चाहते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने यह 'संस्कृत वाक्य प्रबोध' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में दैनिकचर्या में प्राय: प्रयोग होने वाले वाक्यों का संकलन है। ये वाक्य ५२ अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित हैं, यथा-गुरुशिष्य वार्तालाप प्रकरण, गृहाश्रम प्रकरण, नामनिवास-स्थान प्रकरण आदि। घर में बच्चों को संस्कृत सम्भाषण का ज्ञान कराने के लिये यह पुस्तक महर्षि द्वारा प्रदत्त उपहार है। छपाई एवं आवरण सौन्दर्य की दृष्टि से भी पुस्तक अत्यन्त आकर्षक है।

४. शङ्का-समाधान

लेखक- डॉ. वेदपाल (प्रधान, परोपकारिणी सभा)

मूल्य- ७०/- रुपये **पृष्ठ**- १४०

परोपकारी पत्रिका कई वर्षों से निरन्तर शङ्का-समाधान की परम्परा चलाये हुए है, जिसके कि आर्यजगत् में बहुत ही सार्थक परिणाम हुए हैं। धर्म, दर्शन, सिद्धान्त, व्याकरण आदि विषयों पर आये प्रश्नों के सभी समाधान परोपकारी के अलग-अलग अंकों में होने कारण पाठकों को एक साथ उपलब्ध नहीं हो पाते थे। इन सबकी उपयोगिता एवं पाठकों की माँग को देखते हुए इन सबको पुस्तक का रूप दिया गया है। समाधानकर्ता डॉ. वेदपाल आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् हैं, उनके शास्त्रीय ज्ञान से भरी यह पुस्तक सभा की ओर से स्वाध्यायशील आर्यों को सादर समर्पित है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

जाति व्यवस्था बनाम वर्ण व्यवस्था

दक्ष भारद्वाज

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।

सामान्य अर्थ- ब्राह्मण (ज्ञानवान् मनुष्य) इसका (समाज का) मुख था। इसकी दोनों भुजाएँ क्षत्रिय (शासक वर्ग) तथा इसकी दोनों जंघाएँ (तथा पेट) वैश्य (व्यापारी) वर्ग एवं इसके दोनों पैर शूद्र (श्रमिक वर्ग) हुए।

वास्तविक अर्थ- उपरिलिखित मन्त्र सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए व्याख्यायित है।

मूल वैदिक संस्कृति अपने आप में सही थी, परन्तु समय के साथ इसने एक घृणित जाति व्यवस्था का रूप ले लिया जो पूरी तरह से वैदिक संस्कृति के विरुद्ध है। आइये इस पर विचार करें।

'वर्ण' का शाब्दिक अर्थ- धातुपाठ क्र्यादिगण १५५७ में **वृञ् वरणे** का अर्थ चयन करना है। वैदिक काल में लड़कियों को अपना पति चुनने का अधिकार था, वे अपने भावी पति के गले में वरमाला डालतीं थीं जिसे वो स्वयं चुनती थीं, यह उनका अधिकार था।

एक विद्वान् शिक्षाविद् 'ब्राह्मण', जिनके पास ज्ञान का स्रोत है, जो इसे समाज में बाँटते हैं, बोलते हैं उसे सामान्य अर्थ में 'मुख' कहा गया है।

एक क्षत्रिय न केवल अपने परिवार अपितु सम्पूर्ण राष्ट्र या उससे भी अधिक ब्रह्माण्ड की भी रक्षा करता है और उसे बाँध कर रखता है अतः उसे बाहु (बाँधने वाला) उणादिकोश १/२७ कहा। वे समाज की रक्षा करते हैं और उसे एक सूत्र में बाँध कर रखते हैं।

वैश्य सम्पत्ति को समाज में उचित रूप से वितरित करता है (यदि हम जीव-विज्ञान में देखें तो जो पेट की चर्बी है वह तब प्रयोग में आती है जब कोई व्यक्ति बीमार हो या भोजन न ले) इस प्रकार शब्द 'वैश्य' से जुड़े ऊरू का अर्थ-वितरित करने वाला है। अतः जो धन अर्जित कर उसे अपने समाज में उचित रूप में वितरित करे तथा समाज के सभी वर्गों के हितों का खयाल रखे।

'शूद्र' अथवा 'पाद'- जब हम शूद्र शब्द पर विचार करते हैं तो देखते हैं कि शूद्र शब्द का निर्माण **शुचिर् पूतिभावे** धातु से होता है (धातु पाठ-दिवादिगण उणादिकोश-२.१९)का तात्पर्य है जो पवित्र करे। शाब्दिक रूप से '**शोचतीति शूद्रः**' अर्थात् जो समाज के निकृष्ट पदार्थों को साफ करे, वो शूद्र है।

वर्तमान समय में इसका तात्पर्य अनुसूचित जाति, जनजाति, दलित, हरिजन आदि है। यह परिस्थिति चिन्तनीय तथा विनाशक है जिसे आज हम देख रहे हैं। यह पूर्ण रूप से वैदिक संस्कृति के विरुद्ध है।

हमें निश्चित रूप से यह जानना चाहिए कि हमारे शरीर के महत्त्वपूर्ण अंग, जैसे किडनी, हृदय, फेफड़ा आदि शूद्र हैं। यदि वे शरीर की आन्तरिक गतिविधि की सफाई न करें तो हमारा शरीर मृत हो जाएगा। प्रश्न उठता है कि शूद्र के लिए 'पद' पैर शब्द का प्रयोग क्यों किया गया? पद गतौ motion (धातुपाठ दिवादिगण) के इस धातु के अनुसार 'पद' गति का अर्थात् उन्नति या आगे बढ़ने का सांकेतिक अर्थ प्रदान करता है। सम्पूर्ण समाज पद के ऊपर खड़ा है, साथ ही इसी के द्वारा समाज आगे बढ़ता है।

दूसरे तरीके से भी विचार करने पर सांकेतिक रूप से शूद्र शब्द का अर्थ चक्र=पहिया होता है, जिससे गति या प्रगति अर्थ प्राप्त होता है। इसे हम एक उदाहरण के माध्यम से समझते हैं।

एक व्यक्ति यदि बहुत अधिक शिक्षित हो, मजबूत हो और स्वस्थ तथा सम्पत्तिशाली हो, परन्तु यदि वो अपंग या अपाहिज हो, वह खड़ा नहीं हो सके या चल नहीं सके तो? तो वह अपूर्ण या क्षतिग्रस्त या कहें तो वह

असफल माना जाता है। कुछ अपवादों को छोड़कर यह तथ्यपूर्ण विचार ऊपर वर्णित सभी वर्णों के लिए अच्छा है, यदि इनमें से एक भी वर्ण कमजोर पड़ जाय तो सम्पूर्ण समाज के लिए समस्या उत्पन्न होगी। तात्पर्य यह है कि सभी चारों वर्ण समान रूप से समाज या राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

हम इस पर विचार करें- अनावश्यक रूप से जाति-व्यवस्था को समाज पर थोप दिया गया, क्योंकि ऋषि और विद्वान् चले गए और उनके बाद हम उसे संभाल नहीं पाए तथा आधुनिक लोकतन्त्र में समाज को जाति में बाँटकर उससे सत्ता हासिल करना एक अनोखा तरीका बन गया है।

मान लीजिये एक बच्चे का जन्म एक निश्चित जाति में होता है और वो अपने को ब्राह्मण कहते हैं, उसके मानसिक स्तर को जाँचे बिना हम उसे भी ब्राह्मण मान लेते हैं। इसका तात्पर्य है कि आप जिस जाति में जन्म लेते हैं आप उसी में रह जाते हैं।

यह व्यवस्था वर्ण-व्यवस्था के बिल्कुल विपरीत है

उदाहरण- एक बालक का जन्म क्षत्रिय परिवार में होता है और वह व्यापार आरम्भ करना चाहता है। वह निश्चय ही अपने व्यवसाय का चयन करने का अधिकारी है और इस प्रकार वह वैश्य वर्ण को चयन करता है। यदि कोई शूद्र अथवा वैश्य बहुत प्रतिभाशाली है तथा वो उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहता है तो उसके लिए कुछ भी प्रतिबन्धित नहीं है। वह इसका चयन कर सकता है तथा वह ब्राह्मण वर्ण में गिना जाता है। अतः वर्ण-व्यवस्था अत्यन्त वैज्ञानिक है। प्रत्येक व्यक्ति अपना व्यवसाय चयन करने का अधिकार रखता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह क्या पसन्द करता है तथा उसकी क्षमता क्या करने की है। यदि समाज को इसका ज्ञान आ जाये तो इन सब विवादों का निश्चय अन्त हो जायेगा।

पिछड़ा वर्ग को एक धर्म या जाति पर निर्भर नहीं मानना चाहिए। यह उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है और यदि वह योग्य है तो उसकी आर्थिक सहायता करनी चाहिए, जाति और धर्म पर नहीं।

वंशवाद- हमारा इतिहास गवाह है कि अनेकों राजा, नेता जिन्होंने इस देश पर शासन किया, उनकी क्षमता, योग्यता तथा चारित्रिक आचार को देखकर हम उन्हें स्मरण करते हैं न कि उनके शासक वंश को ध्यान रखते हुए। उदाहरण के तौर पर

१. राजा भरत की सन्तान में कोई भी राजा बनने के योग्य नहीं था। उन्होंने एक साधारण व्यक्ति शान्तनु, जो कि तेजस्वी और गुण सम्पन्न था, उसको राजा बनाया।

२. चन्द्रगुप्त मौर्य के समयकाल में नन्दवंश के राजा थे। वह भोगी और विषयी थे। तब चाणक्य ने एक शूद्र बालक जो होनहार और योग्य था, उसको अपने शरण में लेकर प्रशिक्षित कर राजा बनाया, जो एक बहुत तेजस्वी, वर्चस्वी, भारतवर्ष के इतिहास में एक माना हुआ रत्न है। इसका नाम चन्द्रगुप्त मौर्य था।

इन सब दृष्टान्तों से सिद्ध होता है कि वैदिककाल और उसके उपरान्त भी वंशवादी शासन नहीं होता था। केवल योग्य व्यक्ति राजा बनता था, भले वह किसी भी वर्ग का हो।

वेद की भाषा की अद्‌भुत विशालता का एक दृष्टान्त देखिये। ऊपर लिखे वेद के मन्त्र में समाज के वर्णों का वर्णन किया गया है, अब इसी मन्त्र का वैज्ञानिक रूप देखें।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के लिए इन निम्नलिखित शक्तियों की आवश्यकता होती है।

मुखः शब्द की व्युत्पत्ति "**खनति अनेन इति मुखम्**" है, खन् धातु है और मुट आगम है जो मुख बन जाता है।

खन्नाति इति= तात्पर्य तोड़ना (मुट उपसर्ग है) मुख यही करता है।

क्षत्रिय= बाहु=बन्धने शब्दव्युपत्ति १/२७ जो बाँधता है।

वैश्य= विश प्रवशने धातुपाठ
दादिगण=उरु=उणादिकोश १/३० **ऊर्णोत्याच्छादयति**
ा ऊरू:।

शूद्र=उणादिकोश २/१९ पद=गतौ

प्रवेश करने के उपरान्त उस प्राण से भरपूर तम में
ति उत्पन्न होती है यानि बँधे हुए जब परमाणु तम
प्रकृति) में प्रवेश करते हैं, उसके उपरान्त गति का
ारम्भ होता है जो धीरे-धीरे भीषण रूप लेती है और
यह प्राण के परमाणु जो तम में वर्जित हैं उनसे ब्रह्माण्ड की रचना होती है तो इससे वेद के मन्त्रों का विशाल रूप दिखता है।

यह मन्त्र सामाजिक वर्णों की सीख देता है और उनका वैज्ञानिक रूप अत्यन्त सुन्दरता से प्रस्तुत करता है।

सी-५८, डिफेंस कॉलोनी,
नई दिल्ली-९८१००४८१२७

अपील

'सत्यार्थप्रकाश' जैसी क्रान्तिकारी पुस्तक के प्रति किस आर्य की श्रद्धा नहीं होगी और कौन वैदिकधर्मी यह नहीं हेगा कि यह पुस्तक हर मनुष्य के हाथ में होनी चाहिये? आर्यों की इस तीव्र अभिलाषा को परोपकारिणी सभा गत ५ र्षों से साकार रूप देने में प्रयासरत है। साथ में यह भी चाहती है कि यह अमूल्य पुस्तक आकार-प्रकार में भी आकर्षक हो। इन सबको ध्यान में रखकर सभा ने विश्व पुस्तक मेले में इसे ऐसे व्यक्तियों में वितरित करने का निश्चय किया न तक यह अभी नहीं पहुँच पाई थी। इस कार्य में परोपकारिणी सभा तो एक माध्यम मात्र है, मुख्य वितरक आर्यजन हैं। विश्व पुस्तक मेला- २०१९ का कुछ ही समय शेष है। अत: आर्यों से अपील है कि अधिक से अधिक लोगों तक त्यार्थ पहुँचे, इसके लिये मुक्त हस्त से सहयोग करें। सत्यार्थप्रकाश के साथ-साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-रित्र भी नि:शुल्क वितरित किया जायेगा। आप जितनी प्रतियाँ अपनी ओर से बंटवाना चाहें, उतनीं पुस्तकों पर आपका म छापा जायेगा।

एक प्रति की लागत- १००रु.

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. तिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा ुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित ना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। प अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

स्वच्छन्दता मानवता के लिये अभिशाप

ओमप्रकाश आर्य

संसार के समस्त प्राणियों में मानव के अतिरिक्त अन्य कौनसा ऐसा प्राणी है जो अपने जनक को जानता हो, अर्थात् कोई नहीं। समस्त प्राणियों में केवल मानव ही एक ऐसा प्राणी है जो अपने जनक को जानता है और उसका जनक गर्व से कहता है कि अमुक मेरा पुत्र-पुत्री है। इसी भाँति सन्तान भी गर्व से कहती है कि मैं अमुक पिता का पुत्र-पुत्री हूँ। यही नहीं, दादा-दादी, नानाँ-नानी, ताऊ-ताई, चाचा-चाची, मामा-मामी सभी अपने-अपने सम्बन्धियों का गर्म-जोशी के साथ परिचय कराते हैं। इसी भाँति पोता-पोती, दोहिता-दोहिती, भतीजा-भतीजी, भानजा-भानजी आदि सभी अपने-अपने रिश्ते का परिचय गर्व से कराते हैं, परन्तु अब जनक के परिचय और अन्य रिश्ते-नातों को निरस्त कर केवल नर-मादा रूप में नर-नारी को परिणत करने का गहरा षड्यन्त्र चल रहा है, ताकि आने वाले कल को कोई भी श्रीकृष्ण प्रद्युम्न रूप में 'मम पुत्र' कहने का गौरव और कोई भी सन्तान स्वयं को राम-कृष्ण की सन्तान कहने का दम्भ न भर सके, ऐसा परिवर्तन किया जा रहा है। ताकि आने वाले समय में हर जाबाल जनक को न जानने वाला बनकर स्वयं को जाबाला की सन्तान होने का ही परिचय देने का अधिकारी हो। नारी स्वछन्द यौनाचार का अधिकार देना ही जनक के जानने पर गर्व करने का अधिकार छीनना है।

किसी भी नारी की संतान को अपने जनक के परिचय और गौरव से वंचित करना मातृ-गौरव का अपमान करना है। भला स्वच्छन्द यौनाचार को धारण करने वाली नारी की संतान को कौन पुत्र-पुत्री होने की संज्ञा देने का अधिकारी होगा। भला वह तो जाबाला की जाबाल संतान ही होगी। जाबाल का संसार में दादा-दादी, पिता-जनक, नानी-नाना, बुआ-बहन, फूफा-बहनोई, चाचा-ताऊ, पुत्र-पुत्री आदि का रिश्ता बताने वाला कौन होगा? तब नारी स्वच्छन्द यौनाचार का क्या प्रभाव पड़ेगा। इस प्रकार स्वच्छन्द यौनाचार की हवा में किसका किसके साथ क्या रिश्ता है यह कौन तय करेगा और बिना रिश्ते के उनका लालन-पालन-रक्षण-शिक्षण विवाह-सम्बन्ध आदि कौन करेगा। पिता का दायित्व निभाने वाला कल वयस्क अवस्था में नर-मादा रूप में अन्य रिश्ता बना ले तो भला उनको कौन रोक-टोक सकेगा। तब मानव समाज पशु रूप में मानवता का नाश करने वाला बन जायेगा।

अत: आज की समाज के प्रतिभावान्-प्रबुद्ध वर्ग को इस स्वच्छन्द यौनाचार के विरुद्ध उठ खड़ा होना चाहिये। यदि न्यायालय से न्याय की प्राप्ति की संभावना बन सके तो अपील कर व्यवस्था में परिवर्तन होने की अपेक्षा रखनी चाहिये और यदि ऐसा सम्भव न बन सके तो संसद से व्यवस्था परिवर्तन का नियम बनवाकर स्वच्छन्द यौनाचार को रोकने का भरसक प्रयत्न करवाना चाहिये।

आज के समाज की यह सबसे ज्वलन्त समस्या है, अत: इस पर सभी को निष्पक्ष होकर चिन्तन करना चाहिये और वैधानिक स्वच्छन्द यौनाचार को बन्द करवाने का नियम बनवाना चाहिये। अन्यथा आने वाले समय में संसार से मानवता लुप्त हो जायेगी।

नारी तो स्वभाव से निश्छल और भोली है, जिससे सहज ही में चतुर-चालाक लोगों की कुटिल चाल को समझ नहीं पाती। अन्यथा यह कुटिल चाल नारी गौरव के लिये भयंकर अभिशाप सिद्ध होगी। सृष्टि रचयिता ने नारी की महत्ता को स्थापित करने के लिये इसे गृहलक्ष्मी रूप में समाज का गौरव, राष्ट्र का आधार और धर्म की आत्मा रूप में अति सम्मानीय बनाया है, परन्तु आज धूर्तों ने नारी-स्वतन्त्रता के नाम पर उसे गगन से पाताल में पहुँचा दिया और नित्य नये ऊलजलूल नियम बनाकर बाजार की वस्तु बनाने का दुष्प्रयत्न कर रहे हैं। नारी-स्वतन्त्रता का अर्थ स्वच्छन्दता-स्वेच्छाचार-आजादी नहीं होता प्रत्युत अपनी ईश्वर प्रदत्त व्यवस्था से व्यवस्थित होकर नारी स्वरूप बनना होता है। नारी का अपना स्वरूप मातृमान्-आचार्यवान् होना है न कि इनसे अतिरिक्त होकर कुछ और बनना।

नारी के मातृमान्-आचार्यवान् बनने के अतिरिक्त कुछ

और बनने से इसके गौरव-सुरक्षा और सम्मान में अभिवृद्धि होनी होती तो आज के इण्डिया में नारी को आकाश में पहुँच जाना चाहिये था। क्योंकि आज के देश में ऐसा कौनसा गौरवमयी पद है जिस पर नारी को पहुँचने का अवसर न मिला हो या न पहुँची हो, समाज के प्रत्येक क्षेत्र में भले ही धार्मिक, राजनैतिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, वैज्ञानिक, तकनीकी आदि सभी क्षेत्रों में इसने पहुँच बना ली। देश के सर्वोच्च पद राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, मन्त्री, लोकसभा-राजसभा के अध्यक्ष, प्रान्तों के राज्यपाल, मुख्यमन्त्री, मन्त्री, सांसद, विधायक, पंचायत, नगर परिषद् आदि क्षेत्रों में ऊँचे से ऊँचे स्थानों पर पकड़ बनाली। प्रशासनिक क्षेत्र में, न्यायिक क्षेत्र, शैक्षणिक आदि सभी क्षेत्रों में उच्च से उच्च पदों पर सुशोभित है, परन्तु फिर भी स्थिति दिनों-दिन बद से बदतर होती जा रही है। क्यों? इस पर चिन्तन करना होगा।

आज समाज में नारी जीवन के हर क्षेत्र में उच्च से उच्च पद पर पहुँच गई, परन्तु अपने घर-परिवार, समाज और देश में यह असुरक्षित हो गई। भयावह स्थिति तो तब बन गई जब बाड़ ही खेत को खाने लगी। आश्चर्य! जिनको ईश्वर और समाज ने सुरक्षा रखने-करने का अधिकारी बनाया था आज उन्हीं रक्षा-कवचों से नारी असुरक्षित हो गई। अब इसकी सुरक्षा कौन करे? सरकार और समाज नित्य नये सुरक्षा के घेरे बना रही है, हर कदम पर उसे सुरक्षा मुहैया करा रही है, परन्तु आश्चर्य, ज्यों-ज्यों दवा की जा रही है त्यों-त्यों मर्ज बढ़ता ही जा रहा है, रुकने का नाम ही नहीं ले रहा।

हर गली-चौराहे के मोड़-दीवार या पट्ट पर लिखा मिलता है-''बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ'' किन्तु परिणाम विपरीत। आश्चर्य! पढ़ने-लिखने, नौकरी-व्यापार राजनीति और तकनीक में बेटी बेटों से बहुत आगे परन्तु सुरक्षा में दरिन्दों का दूध- पीती बच्चियों पर भी कुठाराघात। इतिहास के पन्नों पर रावण-कंस, शिशुपाल, जरासन्ध न कितने नरपिशाचों का कुकृत्य वृतान्त पढ़ा परन्तु किसी ने भी नन्ही-मुन्नियों को अपनी वासना का ग्रास नहीं बनाया, किन्तु आज तो नन्हीं-मुन्नी बच्चियों की हृदयविदारक घटनाओं से समाचार-पत्र भरे मिलते हैं और दूरसंचार से उन्हीं की दर्दनाक चीख सुनाई पड़ रही होती है। इतना भारी पतन क्यों? इस पर देश के प्रतिभावान् वर्ग को विचार करना ही होगा। कवि के शब्दों में-

अधिकारों की शक्ति से ना कभी सुरक्षा मिलती।
नर केहरी जाय सिंहनी निर्भय वन में विचरती।
मूर्ख जननी डरती-फिरती बना अयोग्य सन्तान

अत: नारी की रक्षा-सुरक्षा, मान-सम्मान और गौरव की अभिवृद्धि का मात्र एक ही उपाय है और वह है सुसंतान का निर्माण। अत: नारी इधर-उधर के व्यर्थ के पचड़े को छोड़कर मातृमान् आचार्यवान् रूप में दीक्षित होकर अपनी संतान का सुनिर्माण करें। सुसंतान की उपस्थिति में किसी की भी नारी की ओर कुदृष्टि डालने की हिम्मत न होगी। नारी को परमात्मा ने संस्थापित, संस्कारित, संवर्धित और सम्पुष्ट करने की अद्भुत क्षमता दी है, इस क्षमता का प्रयोग कर उनसे निर्मित किये जाने वाले समाज को श्रेष्ठ बनाना ही बनाना होगा तब ही नारी माँ-बहन-बेटी और पत्नी रूप में अति गरिमामय रूप को प्राप्त होगी। गरिमामयी नारी का सभी सम्मान करते हैं।

विगत समय में जब नारी स्वयं को वेदानुसार बनाकर मर्यादाओं का पालन करती थी, तब इसका सर्वत्र मान-सम्मान होता था। सभी विज्ञजन नारी के श्री चरणों में अपना मस्तिष्क झुकाने में गौरव का अनुभव करते थे।

समाज में सदा से श्रेष्ठों का सम्मान रहा है। सरकार की शक्ति से भले ही कोई नाटकबाज भी बहुरूपियेपन से सम्मान प्राप्त कर ले, परन्तु समाज तो सदा से चरित्र, कृतित्व से उत्तम होने वालों का ही सम्मान करता रहा है। लाखों-करोड़ों वर्षों पूर्व जन्मी सीता को आज भी उनके उत्तम चरित्र और कृतित्व से अपना सर झुकाता है और माता का सम्मान देता है, क्योंकि महारानी सीता ने घोर आपत्तिकाल में भी अपने स्त्री-धर्म का त्याग नहीं किया। उसने घोर आपत्तिकाल में भी अपने धैर्य को नहीं खोया, जिसका सुपरिणाम, आज भी लोग उनको अपना सर झुकाते हैं।

आर्य परिवारों में नर हो चाहे नारी, सबने अपने दायित्व को निष्ठापूर्वक निभाया था जिससे विश्व में उनके यश-सौरभ की सुगन्ध फैलती रही है, परन्तु अब स्वायत्तशासन को स्वतन्त्रता मानकर, अंग्रेज प्रदत्त व्यवस्था से व्यस्थित

होकर अपना सर्वस्व गौरवमयी रूप लुटाते जा रहे हैं।

भाग्य की विडम्बना ही कहें कि आज आर्यों के पास अपना कुछ भी गौरवमयी नहीं बचा है। जो कुछ भी है वह सब अंग्रेज प्रदत्त है। अत: दूसरों के साज-सम्मान पर कैसा गर्व और बिना गर्व के कैसा मानव? मानव बिना कैसा समाज-कैसा राष्ट्र? यूँ कहने को तो हम हर मानव देहधारी को मनुष्य कहते हैं और सभी अपने आपको मनुष्य होने का दम्भ भरते हैं, परन्तु वस्तुत: मनुष्य होता कौन है इस पर एक दृष्टि डालिये और अपना मूल्यांकन कीजिये।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश में मनुष्य की व्याख्या करते हुये लिखा है कि ''मनुष्य उसी को कहना जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दु:ख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महाअनाथ, निर्बल और गुण रहित क्यों न हों उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सम्राट, महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दु:ख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।''

वेद मनुष्य को संयमी, उद्यमी और तपस्वी होने की प्रेरणा करता है और मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् सन्तान के निर्माण का अधिकार देता है। निर्माण करने वाला दूसरों के निर्माण से पूर्व स्वयं अपना निर्माण करता है और तदुपरान्त दूसरों के निर्माण को तत्पर होता है इसलिये श्रेष्ठ निर्माण के लिये माता-पिता और आचार्य को तपस्वी होना होगा। तपस्या का आधार संयम, संयम का आधार ब्रह्मचर्य का धारण होना, स्वच्छन्द यौनाचार से सर्वथा दूर होने से होता है। अत: समाज के व्यवस्थापकों को विषयी व्यक्तियों की रक्षा-बचाव के लिये सभी को स्वच्छन्द यौनाचार का अधिकार देना उचित नहीं है। अत: नर-नारी दोनों के लिये पूर्णतया वयस्क स्वच्छन्द यौनाचार का निषेध होना चाहिये। मानव जीवन में स्वच्छन्दता का आना अभिशाप तथा स्वतन्त्रता का होना वरदान होता है, किन्तु स्वतन्त्रता का अर्थ-भाव आजाद, उन्मुक्त, स्वच्छन्द, स्वेच्छाचारी नहीं होता प्रत्युत ईश्वरीय व्यवस्था द्वारा स्वयं को व्यवस्थित करना होता है। अत: नारी-स्वतन्त्रता के नाम पर नारी को स्वेच्छाचारी बनाना नारी के लिये अभिशापक है। ज्यों-ज्यों नारी ने स्वतन्त्रता का परित्याग कर स्वच्छन्दता को अपनाया है त्यों-त्यों वह स्वयं ही विनाश के व्यूह में फँसती चली गई। अत: नारी को स्वयं अपनी महानता के लिये स्वच्छन्द यौनाचार का विरोध करना चाहिये और संसद से इसके विरोध में कानून बनाने की प्रेरणा की जानी चाहिये व सर्वोच्च न्यायालय में इसके विरुद्ध अपील करनी चाहिये। इत्योम्।

ग्राम-खानपुर, जिला महेन्द्रगढ़, हरियाणा।

माता का कर्त्तव्य

बालकों को माता सदा उत्तम शिक्षा करें, जिससे सन्तान सभ्य हों और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पावें। जब बोलने लगें तब उसकी माता बालक की जिह्वा जिस प्रकार कोमल होकर स्पष्ट उच्चारण कर सके वैसा उपाय करें कि जो जिस वर्ण का स्थान-प्रयत्न अर्थात् जैसे 'प' इसका ओष्ठ स्थान और स्पृष्ट प्रयत्न दोनों ओष्ठों को मिलाकर बोलना, ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत अक्षरों को ठीक-ठीक बोल सकना। मधुर, गम्भीर, सुन्दर, स्वर, अक्षर, मात्रा, पद वाक्य, संहिता, अवसान भिन्न-भिन्न श्रवण होवे। जब वह कुछ-कुछ बोलने ओर समझने लगे तब सुन्दर वाणी और बड़े छोटे, मान्य, पिता, माता, राजा, विद्वान् आदि से भाषण, उनसे वर्त्तमान और उनके पास बैठने आदि की शिक्षा करें, जिससे कहीं उनका अयोग्य व्यवहार न होके सर्वत्र प्रतिष्ठा हुआ करे। जैसे सन्तान जितेन्द्रिय, विद्याप्रिय और सत्संग में रुचि करे वैसे प्रयत्न करते रहें। व्यर्थ क्रीड़ा, रोदन, हास्य, लड़ाई, हर्ष, शोक, किसी पदार्थ में लोलुपता, ईर्ष्या, द्वेषादि न करें। उपस्थेन्द्रिय के स्पर्श और मर्दन से वीर्य की क्षीणता, नपुंसकता होती और हस्त में दुर्गन्ध भी होता है, इससे उसका स्पर्श न करें। (स. प्र. द्वि. स.)

फलित ज्योतिष की अमान्य मान्यताओं से मानव जगत् में सबसे बड़ा भ्रामिक वैचारिक शोषण

पं. उम्मेद सिंह विशारद

उन्नीसवीं शताब्दी के सबसे महान् सामाजिक सुधारक, आर्ष और अनार्ष मान्यताओं का रहस्य बताने वाले युगपुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने महान् ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' के द्वितीय सम्मुलास के प्रश्नोत्तर में लिखते हैं।

प्रश्न- तो क्या ज्योतिष शास्त्र झूठा है?

उत्तर- नहीं, जो उसमें अंक, बीज, रेखागणित विद्या हैं, वह सब सच्ची, जो फल की लीला है, वह सब झूठी है।

फलित ज्योतिष के द्वारा अवैदिक व सृष्टिक्रम विज्ञान के विरुद्ध अनार्ष मान्यताओं के द्वारा चतुर लोगों ने भारत की जनता का वैचारिक शोषण करके अपना मनोरथ तो पूर्ण किया ही है, अपितु भारतवर्ष को गुलामी के दलदल में धकेलने का भी कार्य किया है। बड़े अफसोस के साथ लिखना पड़ रहा है कि यह पाखण्ड इस वैज्ञानिक युग में भी दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। स्वार्थी और चतुर किन्तु ज्ञान-विज्ञान से शून्य लोग भोली-भाली जनता को फलित ज्योतिष की आड़ में कई प्रकार से लूट रहे हैं।

फलित ज्योतिष का पाखण्ड

कृतं मे दक्षिणेहस्ते जयो मे सव्य आहितः।

(अथर्ववेद)

ईश्वरीय व्यवस्था में मानव कर्म करने के लिये स्वतन्त्र है और क्रमानुसार फल प्राप्ति ईश्वरीय व्यवस्था में होती है। मानव जैसा कर्म करता है वैसा ही फल उसको ईश्वर द्वारा दिया जाता है। अतः मनुष्यों को भरोसा रखना चाहिए कि यदि पुरुषार्थ मेरे दायें हाथ में है तो सफलता मेरे बायें हाथ में है। अतः संसार में जितने भी कार्य सिद्ध होते हैं वे पुरुषार्थ से होते हैं। मनुष्य के जीवन में अगले क्षण क्या होने वाला है, यह वह नहीं जानता है।

भारत में मुगल साम्राज्य की नींव डालने वाले लुटेरे बाबर के जीवन की एक घटना है। जब वह भारत पर आक्रमण करने आया तो भारत के प्रसिद्ध भविष्य बताने वाले ज्योतिषी ने बाबर से कहा कि अभी आप भारत पर आक्रमण न करें, इससे आपको सफलता नहीं मिलेगी। बाबर ने पूछा आपको यह जानकारी कैसे मिली। ज्योतिष ने कहा हमारे फलित ज्योतिष शास्त्र में लिखा है। बाबर ने कुछ सोचकर कहा आप यह भी जानते होंगे कि आप और कितने वर्ष जिन्दा रहोगे, ज्योतिष ने कहा अभी मैं ३७ वर्ष और जिन्दा रहूँगा, बाबर ने म्यान से तलवार निकाली और एक ही झटके में ज्योतिषी का सिर धड़ से अलग कर दिया और कहा कि जिसको अपने अगले क्षण का पता नहीं, ऐसे पाखण्डी पर क्या विश्वास किया जा सकता है और उस ऐतिहासिक युद्ध में बाबर की विजय हुई और ज्योतिषी की बात मिथ्या हुई।

आप कल्पना करें कि मेरे सामने एक भोजन का थाल पड़ा है और उसमें दस कटोरियाँ अलग-अलग व्यंजनों की हैं। पहले मैं कौन-सी कटोरी का पदार्थ खाऊँगा? ज्योतिषी तो क्या स्वयं ईश्वर भी नहीं बता सकते कि पहले मैं कौन-सी चीज खाऊँगा, क्योंकि कर्म करना मेरी स्वतन्त्रता के अधिकार में है।

एक ब्राह्मण काशी में दस वर्ष ज्योतिष-विद्या पढ़ कर अपने गाँव में आया। गाँव का एक उजड्ड जाट लाठी लिये अपने खेत में जा रहा था। जाट ने पूछा आप कहाँ से आ रहे हैं? ब्राह्मण बोला, मैं दस वर्ष काशी से ज्योतिष-विद्या पढ़ कर आ रहा हूँ। जाट ने पूछा महाराज ज्योतिष क्या होता है। ब्राह्मण ने बताया हम अगले क्षण आने वाली बातों को पहले बता देते हैं। महाराज मैं पूछूँ तो आप बतायेंगे? क्यों नहीं, अवश्य पूछिये। ब्राह्मण बोला-मैं उच्च कोटि का भविष्यवक्ता बन गया हूँ। अब जाट ने कन्धे से लाठी उठाकर घुमाकर पूछा- बता मैं तेरे इस लाठी को कहाँ मारूँगा। यह सुनकर ब्राह्मण नीचे ऊपर देखने लगा, यदि मैंने कहा कि सर पे मारेगा तो यह पैरों पर ठोकेगा यदि पैरों पर कहा तो यह सिर पर ठोकेगा। ब्राह्मण सिर झुका कर नीचे देखने लगा। इसलिए फलित ज्योतिष पाखण्ड है।

नव ग्रहों का भ्रम

प्रश्न (सत्यार्थप्रकाश)- जब किसी गृहस्थ ज्योतिर्विदाभास के पास जा के कहते हैं कि महाराज इसको क्या है? तब वह कहते हैं इस पर सूर्यादि क्रूर ग्रह चढ़े हैं। जो तुम इनकी शान्ति, पाठ, पूजा, दान कराओ तो इसको सुख हो

जाए, नहीं तो बहुत पीड़ित हो जाय तो भी आश्चर्य नहीं है।

उत्तर- कहिए ज्योतिर्वित्! जैसी यह पृथ्वी जड़ है, वैसे ही सूर्य आदि लोक हैं। वे ताप और प्रकाशादि से भिन्न कुछ नहीं कर सकते। क्या ये चेतन हैं जो क्रोधित होके दुःख और शान्त होकर सुख दे सकें?

भोली-भाली जनता को ठगने के लिये ग्रहों के प्रकोप का डर उनके दिलों में बिठा रखा है। प्रत्येक ग्रह जड़ है और पृथ्वी से लाखों गुना बड़े हैं फिर वह एक छोटे से मनुष्य पर कैसे चढ़ सकते हैं।

दो नवयुवक एक, बलिष्ठ शरीर बालक और दूसरा मरियल-सा कमजोर शरीर वाले ज्योतिषी के पास जाकर पूछने लगे महाराज हम पर कौन से ग्रह चढ़े हैं जो हमारे कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होते। ज्योतिषी ने बलिष्ठ शरीर वाले युवक से कहा तुम पर सूर्य ग्रह मेहरबान है, तुम्हारा कुछ भी अनिष्ट नहीं होगा और दूसरे कमजोर शरीर वाले युवक से कहा कि तुम पर सूर्य ग्रह चढ़े हैं तुम्हारा यह अनिष्ट करेंगे, जल्दी पूजा-पाठ दान करो, हम सूर्य ग्रह को शान्त कर देंगे।

यह सब कौतुहल एक विद्वान् युवक देख रहा था, उससे रहा नहीं गया, वह चुप भी कैसे रह सकता था ऋषि दयानन्द का भक्त जो था। उसने ज्योतिषी से कहा-मैं अभी इन दोनों की परीक्षा ले सकता हूँ क्या? ज्योतिषी जी ने अहंकार में कहा अवश्य-अवश्य हमारा कथन कभी गलत नहीं होता है। जून का महीना था, दोपहर का समय था, विद्वान् युवक ने दोनों पीड़ित युवकों से कहा, मैं तुम्हारी परीक्षा लूँगा। दोनों के कपड़े उतरवाये और नंगे पैर दोनों को पक्के फर्श पर खड़ा कर दिया और आधा घन्टा खड़े रहने को कहा। किन्तु यह क्या? जो बलिष्ठ शरीर वाला युवक था, जिस पर सूर्य ग्रह मेहरबान था वह चक्कर खाकर गिर गया और कमजोर शरीर वाला किन्तु दृढ़ इच्छा वाला वह युवक जिस पर सूर्य ग्रह कुपित थे, ज्यों का त्यों खड़ा रहा। अब आर्य युवक ज्योतिषी से कहने लगा कहिए महाराज, प्रत्यक्ष में आपकी भविष्यवाणी असफल क्यों हुई है। वास्तव में सूर्य ग्रह जड़ है और ताप से अधिक कुछ नहीं दे सकता है। सूर्य की गरमी का प्रभाव दोनों पर बराबर पड़ा किन्तु सहन क्षमता में दोनों अलग-अलग थे। इसलिए नव ग्रहों का ज्योतिष भ्रम है, धोखा है।

शनि ग्रह पृथ्वी से लाखों मील दूर है और कई लाख गुना बड़ा है- बताइए ज्योतिषी महाराज, शनि ग्रह एक छोटे से आदमी पर कैसे लग सकता है, शनि ग्रह के लगने से तो सारी पृथ्वी ही दब जायेगी। वास्तव में ईश्वरीय व्यवस्था में प्रत्येक ग्रह जड़ है और अपनी-अपनी धुरी पर केन्द्रित है। ये इस सृष्टि क्रम की व्यवस्था को बनाए रखते हैं। यह मानव जगत् का उपकार ही करते हैं किन्तु अपकार कभी नहीं करते हैं।

आश्चर्य होता है शनिवार को कुछ लोगों का ये धन्धा खूब चलता है। वे एक बाल्टी में तेल लेकर जगह-जगह चौराहों पर, घरों में शनि के नाम से लोगों को ठगते रहते हैं और अन्धविश्वासी लोग उनकी बाल्टी को सिक्कों से भर देते हैं। क्या शनिदेव माँगने वाले लोगों पर मेहरबान होते हैं। नहीं, यह उनका धन-हरण का मार्ग है और अधिक आश्चर्य होता है कि अब शनि को देवता बनाकर उनकी मूर्ति भी बना दी गई है और मन्दिर भी बना दिया गया है। ईश्वर भारतवासियों को सुमति दें!

परिवार के प्रत्येक शुभ कार्यों में शुभ दिन, मुहूर्त निकालना भी भ्रम है। वास्तव में पृथ्वी पर सब दिन बराबर होते हैं और एक जैसे होते हैं। ऋतुओं के अनुसार व जलवायु के अनुसार अपना प्रभाव दिखाते हैं। शुभ कार्य करने के लिये प्रत्येक दिन शुभ होता है, किन्तु आप अपना शुभ कार्य तब करें जब ऋतु अनुकूल हो, स्वास्थ्य अनुकूल हो, परिवार सुख-शान्ति में हो, वह दिन किसी भी समय शुभ कार्य के लिए होता है।

वेदों की शिक्षा के आधार पर गणित ज्योतिष सत्य है, गणित ज्योतिष द्वारा हम सौ वर्ष पहले बता सकते हैं कि क्या होगा। जैसे कि तिथियों का हिसाब, दिनों का हिसाब, ऋतुओं का परिवर्तन, सूर्य व चन्द्र ग्रहण। चूंकि यह सारी चीजें चन्द्रमा सूर्य और पृथ्वी इन तीनों की नियमानुसार गति पर निर्भर है, जिसमें एक पल का भी अन्तर नहीं आता। अतः हम सौ साल पहले बतला सकते हैं कि अमुक तिथि, अमुक वार को, अमुक ऋतु में और अमुक समय में सूर्य व चन्द्र ग्रहण होगा तथा कारण को देखकर कार्य का अनुमान अर्थात् कारण को देखकर होने वाले काम का अनुमान आदि।

आर्यसमाज के चौथे नियम में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी कहते हैं कि-

सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

गढ़ निवास, मोहकमपुर, देहरादून

पुस्तक-समीक्षा

पुस्तक का नाम- स्वामी श्रद्धानन्द की जीवन-यात्रा

लेखक- प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

प्रकाशन- वेद प्रचारिणी सभा, महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

मूल्य- ५५०/- **पृष्ठ**- ६३२

प्रश्न उठेगा कि क्यों पिसे को पीसने चले हैं माननीय जिज्ञासु जी? अर्थात् जब स्वामी जी महाराज की अनेकों जीवनियाँ लिखी जा चुकी हैं तो एक नई जीवनी लिखने का भला क्या प्रयोजन? इस प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर तो पुस्तक के पृष्ठ ही दे पायेंगे। हम तो बस इतना ही कहना चाहेंगे कि "हाय! दुनिया क्या जाने पीड़ ?"

स्वामी श्रद्धानन्द जी महज एक महापुरुष ही नहीं हैं बल्कि ऐसा व्यक्तित्व है जो अनेकों व्यक्तित्व अपने में समाहित किये हुये है। वे कभी वक्ता बन जाते हैं तो कभी नेता, कभी वीर बन जाते हैं तो कभी धीर, कभी लेखक बन जाते हैं तो कभी आचार्य, कभी सम्पादक बन जाते हैं तो कभी संन्यासी। अरे! लाख जीवनियाँ भी लिखी जायें तो कम हैं। यह बात इस पुस्तक का लेखक बखूबी जानता है। वरना कौन इतने बड़े परिश्रम का बोझ अपने सर लेगा?

यह जीवनी स्वामी श्रद्धानन्द की अब तक की सबसे बृहत् जीवनी होने का सौभाग्य रखती है और साथ ही एक महान् इतिहासकार की कलम से निसृत होने का भी। काश! कि यह अनुमान प्रमाण का विषय होता कि "यह पुस्तक कितने पृष्ठों का निचोड़ है?" तो निश्चित ही आश्चर्य चकित कर देने वाली संख्या हमारे सम्मुख होती, फिर भी इसके लिये इतना कह देना पर्याप्त है कि यह पुस्तक राजेन्द्र 'जिज्ञासु' की पुस्तक है।

स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन सिर्फ आर्यसमाज के लिये ही नहीं बल्कि समस्त मानव जाति के लिये एक गौरव का विषय है क्योंकि यह वो कहानी है जो पतन से उत्थान की ओर चलती है। यह वो प्रेरणा है जो लाखों के जीवन बदलती है। यह वो दृष्टि है जिससे ऋषि दयानन्द दिखते हैं। यह वो वीरता है जो संगीनों के आगे छाती अड़ाती है। यह वो तड़प है जो खुद को जलाकर रोशनी करती है। यह वो रास्ता है जिस पर चलकर लाखों लोग अपना रास्ता तय करते हैं। यह वो साहस है जिसने हिमालय की तलहटी और गंगा की धारा के बीचों-बीच ऋषि के स्वप्न को साकार रूप दिया। यह वो पृष्ठ है जिसके बगैर आर्यसमाज का इतिहास कुछ भी नहीं। यह वो पृष्ठभूमि है जिसके बगैर आर्यसमाज कुछ भी नहीं। यह तो वो इतिहास है जिस पर लहू के छींटे पड़े हैं और छींटे भी वो जो उनके अपने लहू के हैं।

- सोमेश पाठक, ऋषि उद्यान, अजमेर

कल्पित संन्यासी

जब ऐषणा ही नहीं छूटी तो संन्यास क्योंकर हो सकता है? पक्षपात रहित सत्योपदेश से जगत् का कल्याण करने में अहर्निश प्रवृत्त रहना संन्यासियों का मुख्य काम है। अब अपने अधिकार कर्मों को नहीं करते पुन: संन्यासादि नाम धरना व्यर्थ है। नहीं तो, जैसे गृहस्थ व्यवहार और स्वार्थ में परिश्रम करते हैं, उनसे अधिक परिश्रम परोपकार करने में संन्यासी भी तत्पर रहे, तभी सब आश्रम उन्नति पर रहें। जब लों वर्तमान और भविष्यत् में संन्यासी उन्नतिशील नहीं होते, तब लों आर्य्यावर्त और अन्य देशस्थ मनुष्यां की वृद्धि नहीं होती।

(स. प्र. स. ११)

शङ्का समाधान – ४०

डॉ. वेदपा

शङ्का-त्रयो वेदस्य कर्तारो भण्ड धूर्तनिशाचराः।
जर्फरी तुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचः स्मृतः।।
श्लोक-९

इसकी समीक्षा में ऋषि ने लिखा-अब कहिए। जो चार्वाक्...अगाध समुद्र में जा गिरे।

उपर्युक्त लेख में श्लोक की प्रथम पंक्ति की समीक्षा तो आ गई, परन्तु 'जर्फरी तुर्फरीत्यादि' द्वितीय पंक्ति पर कुछ नहीं लिखा। मेरी जिज्ञासा है कि-जर्फरी तुर्फरीत्यादि क्या होता है? उन पर पण्डितों के वचन कौन से हैं? उन पर आक्षेप कर चार्वाक् वेद को क्या कहना चाहता है और अन्ततः उस पर ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज का मन्तव्य क्या हो सकता है?

जगदीश प्रसाद आर्य, गिरदौड़ा (म.प्र.)

समाधान- क- चार्वाक् की मुख्य आपत्ति का आधार आप द्वारा उद्धृत श्लोक से पूर्व चार्वाक् द्वारा कथित श्लोक हैं-

पशुश्चेन्निहतः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति।
स्वपिता यजमानेन तत्र कस्मान्न हिंस्यते।। -३
मृतानामपि जन्तूनां श्राद्धं चेत्तृप्तिकारणम्।
गच्छतामिह जन्तूनां व्यर्थं पाथेयकल्पनम्।। -४
स्वर्गस्थिता यदा तृप्तिं गच्छेयुस्तत्र दानतः।
प्रासादस्योपरिस्थानामत्र कस्मान्न दीयते।। -५

तथा अग्रिम श्लोक-

अश्वस्यात्र हि शिश्नन्तु पत्नीग्राह्यं प्रकीर्तितम्।
भण्डैस्तद्वत्परं चैव ग्राह्यजातं प्रकीर्त्तितम्।। -१०
मांसानां खादनं तद्वन्निशाचर समीरितम् -१०

उपर्युद्धृत श्लोकों में वेद के नाम पर ज्योतिष्टोम आदि में की जाने वाली पशु-हिंसा, मृतक-श्राद्ध तथा मांस-भक्षण को आधार मानकर वेद की आलोचना की गई है। साथ ही अश्वमेध यज्ञ में यजमान पत्नी का अश्व के साथ समागम भी चार्वाक् की आलोचना का आधार है।

यद्यपि चार्वाक् प्रोक्त सभी कृत्य पूर्णतः अवैदिक हैं, किन्तु इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मध्यकाल में ये सभी कृत्य वेद के नाम पर प्रचलि थे। वाल्मीकीय रामायण में दशरथ के पुत्रेष्टि के अवस पर सम्पन्न अश्वमेध का वर्णन उपलब्ध है, जिसमें कौशल्य का अश्व के साथ शयन का वर्णन है।

चार्वाक् आदि की वेदविषयक इस धारणा का मू महीधर आदि कृत वेदभाष्य हैं। इन भाष्यकारों ने वेदभाष करते हुए अश्लीलता ही नहीं, असंभाव्यता का भी विच किए बिना स्व-कल्पनाओं को वेद पर आरोपित कर दिया

महर्षि दयानन्द ने महीधर आदि भाष्यकारों को भाण्ड धूर्त, निशाचरवत् कहा है, क्योंकि वेद विषयक इस धारण का आधार उक्त भाष्य ही हैं। तद्यथा-**''हाँ भाण्ड धू निशाचरवत् महीधरादि टीकाकार हुए हैं, उनकी धूर्तत है वेदों की नहीं''**

-स. प्र. समु. १२, पृ. २७

महर्षि का स्पष्ट मत है कि चार्वाक् ने वेद को देखे सुने, पढ़े बिना उपर्युक्त आलोचना की है।

ख- जर्भरी, तुर्फरी

चार्वाक् के जिन **जर्भरी**-(चार्वाक् के श्लोक 'जर्फरी' है।) **तुर्फरी** शब्दों को उद्धृत कर पण्डित वच कहा है, ये दोनों पद एक ही ऋङ्मन्त्र में पठित हैं। सम मन्त्र है-

सृण्येव जर्भरी तुर्फरीतू नैतोशेव तुर्फरी पर्फरीका।
उदन्यजेव जेमना मदेरू ता मे जराय्वजरं मरायु।।
ऋ. १०/१०६/६

प्रस्तुत ऋङ्मन्त्र में **'जर्भरी', 'तुर्फरी', 'पर्फरीका उदन्यजा, जेमना, मदेरू** आदि पद हैं। चार्वाक् के मत ये पद पण्डितों के वचन हैं। स्यात् उसकी दृष्टि में इन प में कोई वैशिष्ट्य न हो, उसे यह (जर्भरी, तुर्फरी आदि निरर्थक तुकान्त प्रतीत हुए हों और उसने इन्हें साधारण प मानकर कथन किया है कि ये पद पण्डितों के वचन है अर्थात् इन में कोई वैशिष्ट्य नहीं है, क्योंकि उस समय वेद को ईश्वरीय मानने की परम्परा थी।

यास्कीय निरुक्त का १३ वाँ अध्याय अतिस्तु

अध्यात्म प्रसङ्गयुक्त है। दैवत काण्ड (अ. ७-१२) में प्राय: आधि-दैविक व्याख्या है। वैदिक देवता 'अश्विनौ' नित्य द्विवचनान्त है। अर्थात् **'अश्विनौ' पद से दो शक्तियों/गुणों का वर्णन एक साथ है।** उक्त मन्त्र का देवता (प्रतिपाद्य) 'अश्विनौ' है। यह मन्त्र निरुक्त के तेरहवें अध्याय में उद्धृत एवं व्याख्यात है। अत: इसमें 'अश्विनौ' की अतिस्तुति है। अर्थात्-**जर्भरी, तुर्फरी पदों द्वारा ईश्वर की दो शक्तियों का वर्णन है।** तद्यथा-

सृणि-दात्री (इसे उत्तर भारत में दरांती, दरांत, दात्र कहा जाता है।) के दो कार्य हैं- **१. भरण २. हनन।** जिस प्रकार चने आदि की फसल को प्रारम्भ में फूल आदि बनने से पूर्व दात्री द्वारा ऊपर से काटने पर उस फसल की वृद्धि होती है और फूल-फल के बाद काटने पर हनन। सामान्य जन भी जानता है कि वसन्त ऋतु के आगमन से पूर्व जनवरी मास के अन्त में जिन वृक्ष-वनस्पतियों की उपशाखाओं को काट-छाँटकर पृथक् कर दिया जाता है, वह शाखाएँ पूर्वापेक्षया अत्यधिक विस्तार को शीघ्र प्राप्त कर लेती हैं। इसी प्रकार वह परमेश्वर भी जगत् का भरण-पोषण तो करता ही है, प्रलयकाल आने पर हनन भी करता है। **इसे ही 'जर्भरी', 'तुर्फरी' शब्दों द्वारा कहा गया है।** इसी प्रकार अन्य शब्द हैं।

इन शब्दों को विस्तार से जानने के लिए निरुक्त के साथ ही स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक एवं आचार्य सायण के वेद भाष्य का अवलोकन करें।

चार्वाक् ने मध्यकाल की कतिपय कुप्रथाओं को अपने अज्ञान के कारण वेदमूलक मानकर वेद की आलोचना की है। साथ ही उसने विशिष्ट ईश्वरीय गुणों को बिना जाने ही जर्भरी, तुर्फरी आदि शब्दों को तुकान्त मानकर उनकी आलोचना की है। यास्क के शब्दों में-**"नैष स्थाणोरपराधो यदेनमन्धो न पश्यति"** यदि कोई दृष्टिहीन स्थाणु को न देखकर उससे टकराये तो इसमें स्थाणु का अपराध नहीं है। यदि चार्वाक् वेद को जाने बिना उसकी आलोचना करता है तो यह उसी का अज्ञान है।

महर्षि दयानन्द की दृष्टि में इस सब का मूल वाममार्गियों द्वारा वेद का अनर्थ किया जाना है। तद्यथा-**"जो वाममार्गियों ने मिथ्या कपोल कल्पना करके वेदों के नाम से अपना प्रयोजन सिद्ध करना अर्थात् यथेष्ट मद्यपान, मांस खाने और परस्त्रीगमन करने आदि दुष्ट कामों की प्रवृत्ति होने के अर्थ वेदों को कलंक लगाया, इन्हीं बातों को देखकर चारवाक, बौद्ध तथा जैन लोग वेदों की निन्दा करने लगे।** द्र. स. प्र. समु. १२, पृ. २७१"

सम्पर्क-९८३७३७७९३८

ऋषि उद्यान में योगदर्शन एवं प्रारम्भिक संस्कृत शिक्षण की कक्षाएँ प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के आचार्य विद्यादेव जी के द्वारा ऋषि उद्यान में **दिनांक १ जनवरी २०१९** से **योगदर्शन एवं प्रारम्भिक संस्कृत शिक्षण की कक्षाएँ प्रारम्भ** की जा रही हैं। अध्ययन के इच्छुक जनों के निवास एवं भोजन की व्यवस्था परोपकारिणी की ओर से नि:शुल्क रहेगी। स्थानीय व्यक्ति प्रतिदिन आना-जाना करें।

अध्यापन सम्बन्धी सम्पूर्ण व्यवस्था आचार्य विद्यादेव जी के अधीन रहेगी एवं आवास आदि की व्यवस्था ऋषि उद्यान कार्यालय द्वारा की जायेगी। आवासीय अभ्यर्थियों के लिये आश्रम सम्बन्धी समस्त नियमों का पालन अनिवार्य होगा।

आचार्य विद्यादेव
सम्पर्क- (१) ९८७९५८७७५६
(२) ८२३८७२२६७२

कार्यालय ऋषि उद्यान
०१४५-२६२१२७०
कार्यालय परोपकारिणी सभा
०१४५-२४६०१६४

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रात: एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। *गुरुकुल*- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नि:शुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था नि:शुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का नि:शुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा नि:शुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। *विशाल पुस्तकालय*- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ नि:शुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में नि:शुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अत: आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ दिसम्बर २०१८ तक)

१. श्री रामनिवास भूतड़ा व श्रीमती रामकन्या भूतड़ा, पीपाड़ सिटी २. स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ३. श्री नाथूलाल त्रिवेदी, भीलवाड़ा ४. श्रीमती रामप्यारी त्रिवेदी, भीलवाड़ा ५. आर्यसमाज, भीलवाड़ा ६. श्री कौशल गुप्ता, गाजियाबाद।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१ से १५ दिसम्बर २०१८ तक)

१. श्रीमती साक्षी मण्डल, अजमेर २. श्री सुरेशचन्द व रमेशचन्द गर्ग, अजमेर ३. श्री शान्तिस्वरूप गोयल, लुधियाना ४. डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा, अजमेर ५. श्री प्रकाश चतुर्वेदी, मुम्बई ६. कै. चन्द्रप्रकाश व श्रीमती कमलेश त्यागी, रुड़की।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

ऋषि मेला २०१८ के दानदाता

१. श्रीमती स्मारिका वैश्य, लखनऊ २. श्री प्रियव्रत, नई दिल्ली ३. श्रीमती अंजलि कपूर, दिल्ली ४. श्री पुरुषोत्तम बूब, अजमेर ५. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ६. श्रीमती सरोज, अजमेर ७. श्री राजेन्द्र कुमार सिंघल, अजमेर ८. श्री चन्द्रप्रकाश भटनागर, अजमेर ९. श्री एस.एस. सिद्धू, अजमेर १०. श्री मोहनलाल तँवर, अजमेर ११. श्री अभिमन्यु तँवर, अजमेर १२. श्री तन्मय तँवर, अजमेर १३. सुश्री सुनीता तँवर, अजमेर १४. श्री राजेश त्यागी, अजमेर १५. श्री वासुदेव आर्य व श्रीमती कुमुदिनी आर्य, अजमेर १६. श्री नाथूलाल कांकाणी, अजमेर १७. श्री राम कोलवानी (अरोड़ा), अजमेर १८. श्री माणकचन्द राँका, अजमेर १९. डॉ. अचला आर्य, अजमेर २०. श्री महेन्द्रप्रसाद, अजमेर २१. डॉ. आर.के. मेहता, अजमेर २२. श्रीमती निर्मला मेहरा, अजमेर २३. मै. प्रेम डेन्टल क्लीनिक, अजमेर २४. श्री बी. रामचन्द्र आर्य, हैदराबाद, २५. श्री एस.के. अरोड़ा, अजमेर २६. श्री रामदेव आर्य, अजमेर २७. मै. जैन बिल्डर्स, अजमेर २८. मै. मधु एजेन्सीज, अजमेर २९. श्री बच्चनप्रसाद जायसवाल, गोरखपुर ३०. श्री धर्मवीर सिंह, पानीपत ३१. डॉ. गौतमदेव शारदा, अजमेर ३२. श्री मनोज शारदा, अजमेर ३३. श्रीमती रजनी शारदा, अजमेर ३४. श्री सौरभ शारदा, अजमेर ३५. श्री जितेन्द्र कुमार शर्मा, अजमेर ३६. श्री मनीष पण्ड्या, अजमेर ३७. श्री ओमप्रकाश लड्ढा, अजमेर ३८. श्री सुधीर गुप्ता, अजमेर ३९. श्री विनोद कुमार गुप्ता व श्रीमती पुष्पा गुप्ता, अजमेर ४०. डॉ. एस.के. सिंह, महाराजगंज ४१. श्री शंकरलाल शर्मा, जयपुर ४२. श्री रामसिंह, रेवाड़ी ४३. श्री श्रद्धानन्द व श्रीमती शान्ति देवी शास्त्री, अजमेर ४४. श्री ओमप्रकाश बाहेती, अजमेर ४५. श्री नवीनचन्द आर्य, जमालपुर खगड़िया ४६. श्रीमती अर्चना माथुर, कोटा ४७. श्री नकुल भारद्वाज, अजमेर ४८. मै. आर.आर. ज्वैलर्स, अजमेर ४९. मै. कृष्णा मेडिकल स्टोर, अजमेर ५०. श्री आर.पी. माथुर, अजमेर ५१. श्री जस्साराम, रामगढ़ ५२. श्री ओमप्रकाश कासतिया, काँगड़ा ५३. श्री गेंदाराम आर्य, यमुनानगर ५४. डॉ. आदित्यवर्धन, देहरादून ५५. श्री ओमप्रकाश, हनुमानगढ़ ५६. श्री गणपत राव बाघ, बीदर ५७. श्री विनोद आर्य, करनाल ५८. श्री हुकुमचन्द, काँगड़ा ५९. श्री रणवीर सिंह, कोझिकोड ६०. श्रीमती सरला माहेश्वरी, ब्यावर ६१. डॉ. आशा खन्ना, ब्यावर ६२. मै. अजमेर फूड प्रोडक्ट्स प्रा. लि., अजमेर ६३. श्रीमती भगवानसहाय शर्मा, अजमेर ६४. श्री करतार सिंह बत्रा,

जोधपुर ६५. आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश II, नई दिल्ली ६६. श्रीमती विनीता चौहान, चुरु ६७. श्री साहेबसिंह, मुजफ्फरन ६८. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर ६९. प्रो. योगेन्द्रनाथ गुप्ता, जम्मू ७०. श्री देवपाल सिंह आर्य, लालूखेड़ी, मुजफ्फरनगर श्री बलवान सिंह, झज्जर ७२. श्री अभिमन्यु गहलोत, ब्यावर ७३. श्री रामेश्वरप्रसाद भूतड़ा, अजमेर ७४. श्रीमती शर्मा, ब्यावर ७५. श्री ओमप्रकाश जटिया, अजमेर ७६. श्री ब्रजराज आर्य, ब्यावर ७७. श्री नरेन्द्र आर्य, ब्यावर ७८. श्री चन्द्रकान्ता आर्य, ब्यावर ७९. श्री विरल आर्य, ब्यावर ८०. श्रीमती शिखा आर्य, ब्यावर ८१. सुश्री सलोनी आर्य, ब्य ८२. सुश्री आकांक्षा, ब्यावर ८३. श्री यज्ञदत्त शर्मा, अजमेर ८४. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर ८५. श्री योगेश तँ अजमेर ८६. श्री जतनचन्द्र एडवोकेट, अजमेर ८७. डॉ. सञ्जय कुमार विश्नोई, लखनऊ ८८. श्रीमती सुमनलता अ शाहजहाँपुर ८९. श्रीमती स्नेहलता, अम्बाला शहर ९०. श्री पी.आर. पाटिल, कोल्हापुर ९१. श्री अनिल गुप्ता, अजमेर श्री मोहनदेव शास्त्री, भरतपुर ९३. श्री वीरेन्द्र यादव, अलीगढ़ ९४. श्री योगमुनि, धुले ९५. श्रीमती धन्वन्तिदयाल रेलन, धुले ९६. श्री सत्यनारायण कालानी, अजमेर ९७. श्री प्रकाशचन्द्र गुप्ता, ब्यावर ९८. श्री चिरंजीवलाल भण्डारी, ९९. श्री मोहनलाल (मुमुक्षु मुनि), अजमेर १००. श्रीमती जी. इन्दिरा, अय्यपानगर १०१. बी. कृपाकर रेड्डी, रंगारे १०२. श्री लेखराम, सूरीनाम १०३. श्री राजेन्द्र सिंह, नई दिल्ली १०४. श्री देवदत्त तनेजा, अजमेर १०५. डॉ. प्रकाश क शारदा, अजमेर १०६. ब्रिगेडियर मोहन लड्ढा, हरिद्वार १०७. डॉ. कृष्णलाल डांग, सिरमोर १०८. श्री आर्यन ब्र अजमेर १०९. श्री मंगलप्पा आर्य, बीदर ११०. श्री रामस्वरूप आर्य, अलवर १११. श्री शम्भुनाथ आर्य, हरिद्वार ११२. हरिबन्धु महापात्रा, गंजाम ११३. श्री सोहनलाल कटारिया, अजमेर ११४. श्री आशीष कटारिया, अजमेर ११५. श्री सुधा वर्मा, अजमेर ११६. श्री सुभाष माहेश्वरी, अजमेर ११७. श्री आनन्द गर्ग, अजमेर ११८. मै. बांठिया एण्ड कं. लि., अजमेर ११९. मै. हिंगा ब्रदर्स, अजमेर १२०. श्री हरफूल सिंह राठी, रुड़की १२१. श्री शिवकुमार कुर्मी, ज १२२. श्री रामपुत्र आर्य, हमीरपुर १२३. आर्यसमाज शिवगंज १२४. आर्यसमाज, गढमुक्तेश्वर १२५. श्री रामलाल अ जयपुर १२६. मै. अमृत ट्रेडिंग कं., अजमेर १२७. श्री मयंक कुमार, अजमेर १२८. श्रीमती रतनदेवी, अजमेर १२९. पन्नालाल, जेठाना १३०. श्री नारायण, जेठाना १३१. श्री दुर्गाराम गंगवार, जेठाना १३२. श्री बालमुकुन्द किशन नव गुलाबपुरा १३३. श्रीमती अरुणा पारीक, अजमेर १३४. श्रीमती भँवर देवी, जयपुर १३५. श्री केहरसिंह, जनकपुरी, दि

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इ चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रातः ९ से ११ बजे तक रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

पृष्ठ १० का शेष भाग...

देखते हैं, किसी के शरीर में, मन में, बुद्धि में देखते हैं तो हम उसको भी पीड़ित मानते हैं। यदि आप यह न मानें कि हमारा अस्तित्व सदा से है तो इसलिए वह व्यवस्था ही नहीं बन सकती। **न परीक्षा, न परीक्ष्यं, न कर्त्ता कारणं न च**- तो कोई कर्त्ता भी नहीं बनेगा, कर्त्ता नहीं बनेगा तो कार्य भी नहीं बनेगा, कार्य नहीं बनेगा तो कारण भी नहीं बनेगा।

आज तो सब कुछ व्यवस्था से हो रहा है। पर यदि संसार में अच्छा और बुरा ही नहीं रहेगा, तो आप किसे कहेंगे कि तुम अच्छे काम करो और किसे कहेंगे कि तुम बुरे काम मत करो, क्योंकि अच्छे और बुरे की कोई परिभाषा ही नहीं रहेगी। अच्छा और बुरा कुछ होगा ही नहीं। जब 'नहीं है' आप कहते हो तो केवल अच्छा नहीं है यह भी नहीं कहते और बुरा नहीं है यह भी नहीं कहते। वहाँ 'नहीं है' का मतलब-न अच्छा है, न बुरा है, न ये है, न वो है, न मैं हूँ, न वह है। जब यह परिस्थिति आ जाएगी तो संसार का व्यवहार, व्यापार, कैसे चलाओगे? यहाँ तो सब कुछ 'है', यह मान करके काम हो रहा है और तभी हो भी पाता है। यदि कोई व्यक्ति ही नहीं है तो हम कह किसे रहे हैं। कोई कार्य नहीं है तो उसकी इच्छा क्यों कर रहे हैं? कोई चीज है नहीं तो उसका अभाव क्यों अनुभव हो रहा है? और जब कोई चीज मिलनी ही नहीं है तो दु:ख कैसे है? किन्तु मनुष्य को दु:ख है, सुख है, अभाव है, प्राप्ति है, प्रसन्नता है, यह सब किन कारणों से? तो समझ में आता है कि ये 'है' मान करके काम करने से बनता है। सत्ता को स्वीकार करने से काम करता है।

इसलिए आत्मा की, मन की, बुद्धि की, इन्द्रियों की सत्ता है। अन्तर कहाँ समझ में आया कि शरीर से हम माता-पिता से जुड़े हैं, भाई-बहनों से किसी कारण से संबद्ध हैं लेकिन मन, बुद्धि, इन्द्रियों से हम बिल्कुल पृथक् हैं, इसलिए संसार में जो भी बना है, संसार में जो भी पैदा हुआ है उसको आप देखेंगे कि वो दूसरे से बिल्कुल अलग है, उसकी अपनी एक ईकाई है, अपनी एक सत्ता है और उस सत्ता के कारण से वो दूसरे से नितान्त भिन्न है। इसलिए इस सत्ता को हम मान करके, इस सत्ता के प्रकाश को, इस सत्ता के पुन: पुन: उत्पन्न होने को पुनर्जन्म या पुनर्भव कहते हैं। यह पुनर्भव की सत्ता हमारे मृत्यु के कारण से बनती है। मृत्यु के होने से पुनर्जन्म का मार्ग खुलता है। इस दृष्टि से यहाँ मृत्यु को समझने के लिए इस जन्म को समझना अनिवार्य बताया गया है।

पाठकों की प्रतिक्रिया

'परोपकारी' के ताजा अंक में पुस्तकाध्यक्ष के रूप में, सचित्र तुम्हारा अवलोकन कर प्रसन्नता हुई। समाज को आर्य संस्कृति की ध्वजवाहक 'आर्यसमाज संस्था' को वर्तमान अनैतिकता, मूल्यहीनता, असामरस्य के विकराल दुष्काल में, उसके उदात्त, ''सत्यं, शिवं, सुन्दरम्'' के कालजयी सन्देश की बहुत आवश्यकता है। आर्यसमाज ने सामाजिक सुधार के साथ-साथ, राष्ट्रीय आन्दोलन में भी महती सकारात्मक भूमिका निभाई थी। आर्यसमाज 'युगधर्म' के प्रति सदैव सजग, सचेत रहा। सम्प्रति, अभूतपूर्व विकृति, विसंगतियों की उद्दाम सुनामी, सहज, शालीन पारिवारिक, सामाजिक जीवन को पूरी उग्रता से ध्वस्त कर रही है, ऐसी विषादवेला में, आगे बढ़कर, आर्यसमाज आर्यजन को भीषण चुनौती को स्वीकार करना चाहिए। (''परोपकारी'' के पुस्तकालय में कीर्तिशेष श्रीसत्यदेव विद्यालङ्कार प्रणीत राष्ट्रवादी दयानन्द पुस्तक अवश्य होगी, राष्ट्रीय आन्दोलन में आर्यसमाज की सक्रिय भागीदारी को पुस्तक सविस्तार उद्घाटित करती है।) निष्ठावान प्रबुद्ध सभी आर्यसमाजियों को, अश्रुतपूर्व इस स्थिति से चिन्तित, मर्माहत होना चाहिए-देश उनको ललकार रहा है। मैं पीड़ातुर हूँ अत: 'परोपकारी' के माध्यम से अपनी व्यथा, वेदना, आर्यसमाज के मनस्वी सभासदों, जुझारू सेनानियों तक पहुँचाना मेरा अभीष्ट है।

डॉ. सत्येन्द्र चतुर्वेदी, जयपुर

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२

आधुनिक कपिल
(आचार्य उदयवीर शास्त्री)

सोमेश 'पाठक'

जिसे भारतीय दर्शनों की ओलम भी आती है वह आचार्य उदयवीर शास्त्री जी के नाम से भलीभाँति परिचित होगा। आर्यसमाज जब-जब दार्शनिकों के गुणगान करेगा तब-तब आचार्य उदयवीर शास्त्री विशिष्ठ स्थान पर होंगे। यह वो नाम है जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन विद्या के लिये लगाया। पर दुर्भाग्य है कि ऐसा महान् पण्डित आर्यसमाज के नेताओं की राजनीति का शिकार बना। यह भोली आत्मा वह दु:ख भोगकर संसार से गयी जिसकी कि वह अधिकारिणी नहीं थी। अक्सर संसार में यह देखा जाता है कि स्वार्थी तथा बुद्धिहीन लोगों के कारण साधु, संन्यासी तथा बुद्धिमान् लोग कष्ट उठाते हैं। जिस समाज व राष्ट्र के लिये वे अपना जीवन लगाते हैं वही समाज व राष्ट्र उन्हें गहरे से गहरे घाव देने में चूकता नहीं है।

इस संक्षिप्त लेख में आचार्य जी के विराट् व्यक्तित्व को समेट पाना हमारे वश से बाहर की बात है अत: पाठकों से निवेदन है कि कम से कम एक बार आचार्य जी की आत्मकथा ''जीवन के मोड़'' का आद्योपान्त पारायण जरूर करें। इस आत्मकथा में आचार्य जी ने अपने जीवन के सुख-दु:खों का बड़ी मार्मिकता से वर्णन किया है और वह इसलिये नहीं कि उन्हें इससे किसी की सहानुभूति चाहिये थी, बल्कि इसलिये कि उन्हें भावी सन्तति को आगाह करना था कि जीवन में ऐसी भूलें कभी न करें जिससे कि स्व उन्नति रुक जावे तथा अपनी सामान्य आवश्यकताओं के लिये भी दूसरों के मुँह की ओर ताकना पड़े। आचार्य जी अपनी आत्मकथा का परिचय देते हुये लिखते हैं-

''आने वाले नवयुवकों से मेरा निवेदन है कि जब उनके जीवन में कोई भी ऐसा अवसर आये जिससे वे अपने जीवन को अधिक उदात्त व सफल बना सकें, उसकी कभी उपेक्षा न करें- उसको स्वीकार करें तो वे व्यावहारिक स्थिति में अपना जीवन सुख-सुविधा व प्रतिष्ठापूर्वक व्यतीत कर सकेंगे।''

उसी स्थल पर आचार्य जी ने अपनी उन भूलों को भी स्वीकार किया है जिनके कारण उन्हें अपने जीवन में अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। वे लिखते हैं- ''मैंने यह परिचय इस दृष्टि से लिखा है कि जीवन में जो भूलें अपनी अज्ञानता के कारण मैंने कीं, झूठे दुराग्रह के कारण अपने हितैषी अनुभवी वृद्धजनों के बताये हुए मार्ग की मैंने उपेक्षा की और सम्भवत: जो घटना मेरे जीवन को अच्छे, आधुनिक काल के अनुसार उन्नत दिशा में ले जा सकती थी उन पर मैंने कोई ध्यान नहीं दिया।''

(खेद का विषय है कि आज शायद ही किसी प्रकाशक के पास यह पुस्तक उपलब्ध हो।)

आज की नई पीढ़ी में कितने लोग ऐसे हैं? जो यह जानते हों कि महान् क्रान्तिकारी सरदार भगतसिंह तथा भगवतीचरण वोहरा आचार्य जी के प्रिय शिष्यों में से एक थे। जो यह जानते हों कि प्रसिद्ध क्रान्तिकारिणी दुर्गा भाभी को यह दिग्गज दार्शनिक अपनी जान पर खेलकर, साइकिल के डण्डे पर बिठाकर पुलिस की नजरों से बचाकर निकाल ले गया था। अस्तु।

आचार्य उदयवीर शास्त्री का जन्म राजपूतों के तोमर वंश में ६ जनवरी १८९५ ई. को गाँव-बनैल, परगना-पहासू, तहसील-खुर्जा, जिला-बुलन्दशहर (उ.प्र.) में हुआ था। आचार्य जी के पिता का नाम पूर्णसिंह था। आचार्य जी ने अपनी आत्मकथा में अपने पूर्वजों की पाँच पीढ़ियों तक के नाम गिनाये हैं। श्री पूर्णसिंह के पिता श्री टीकमसिंह, श्री टीकमसिंह के पिता श्री केसरीसिंह, श्री केसरीसिंह के पिता ठा. खुशहाल सिंह तथा ठा. खुशहाल सिंह के पित श्री हरिसिंह थे।

आचार्य जी का प्रारम्भिक अध्ययन उनके गाँव के प्राइमरी स्कूल (मदरसे) में हुआ। जहाँ उन्होंने हिन्दी औ उर्दू भाषा का अध्ययन किया। मात्र १० वर्ष की आयु में प मुरारीलाल शर्मा को सुनकर आप पर आर्यसमाज का प्रभा पड़ा। पं. मुरारीलाल शर्मा (यह नाम भी इतिहास के पन्

में दबा पड़ा है। शर्मा जी आर्यसमाज की प्रथम पीढ़ी के प्रचारकों में ऊँचा स्थान रखते थे तथा प्रथम गुरुकुल सिकन्दराबाद के संचालक थे।) ने आपकी प्रतिभा को देखते हुये आपको गुरुकुल सिकन्दराबाद में प्रवेश की स्वीकृति दे दी। सन् १९०७ ई. में इस गुरुकुल को सिकन्दराबाद से हटाकर फर्रुखाबाद में स्थापित किया गया। जिसमें ले जाये गये ४० छात्रों में एक आप भी थे। सन् १९१० ई. में आचार्य जी गुरुकुल ज्वालापुर चले गये। उस समय गुरुकुल ज्वालापुर अपनी बुलन्दियों पर था। पं. गंगादत्त जी, पं. भीमसेन जी, पं. पद्मसिंह शर्मा और पं. नरदेव शास्त्री जैसे महान् आचार्य और साहित्यकार गुरुकुल के अध्यापक हुआ करते थे। ऐसे आचार्यों के श्री चरणों में बैठकर उदयवीर जी ने विद्या ग्रहण की। उन्होंने क्या-क्या पढ़ा? यह बताना न तो हमारी लेखनी का विषय ही है और न सामर्थ्य। हाँ, इतना कहा जा सकता है कि ऐसा कोई विषय नहीं था जिसके वे विशेषज्ञ न थे। फिर चाहे वह दर्शन हो, वेद हो, उपनिषद् हो, गणित हो, विज्ञान हो, भूगोल हो, इतिहास हो, व्याकरण या फिर साहित्य हो। सामान्यतया यह समझा जाता है कि आचार्य जी दार्शनिक थे पर यहाँ यह बताना भी मैं जरूरी समझता हूँ आचार्य जी जैसा इतिहासज्ञ भी लम्बे काल से धरती तल पर पैदा नहीं हुआ है।

गुरुकुल ज्वालापुर के बाद आचार्य जी ने ओरियण्टल कॉलेज, लाहौर से शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की। पुनः गुरुकुल ज्वालापुर लौटकर अध्यापन कार्य किया। ४ वर्ष ज्वालापुर अध्यापन करने के बाद आप लाहौर नेशनल कॉलेज में अध्यापन के लिये चले गये। इसी कॉलेज में सरदार भगतसिंह, भगवतीचरण वोहरा तथा यशपाल जैसे क्रान्तिकारी पढ़ा करते थे, जो कि आचार्य जी के प्रिय शिष्यों में थे। क्रान्तिकारी गतिविधियों में आचार्य जी का नेतृत्व सदा उन्हें मिलता रहा। भगवतीचरण वोहरा से तो आचार्य जी के पारिवारिक सम्बन्ध जैसे थे।

सन् १९२१ ई. में आचार्य जी का विवाह श्रीमती विद्याकुमारी (विद्यावती) जी से हुआ, जो कि सौम्यता और शालीनता की प्रतिमूर्ति थीं। इस देवी की सादगी को जिसने देखा है, वह समझ सकता है कि क्यूँ दुनियां का हर विचारशील मनुष्य नारीशक्ति को आदर्श मानता है? आचार्य जी को सन्तान के रूप में तीन पुत्रियाँ प्राप्त हुयीं। जिनके नाम क्रमशः श्रीमती ऊषा, श्रीमती अरुणा व श्रीमती आभा है। अस्तु।

आचार्य जी ने लेखन कार्य बहुत बड़े स्तर पर किया। इस महान् कार्य का प्रारम्भ उन्होंने सन् १९२३ ई. में कौटिलीय अर्थशास्त्र की 'नयचन्द्रिका' नामक टीका के सम्पादन और प्रकाशन के साथ किया था। इसके बाद सन् १९२५ ई. में 'अर्थशास्त्र' का हिन्दी भाष्य किया।

इसके बाद आचार्य जी का चिन्तन विशेष रूप से दर्शनों की गुत्थियाँ सुलझाने में व्यस्त हो गया। ऋषिवर दयानन्द का यह उद्घोष कि 'षड्दर्शनों में विरोध नहीं है' को आचार्य उदयवीर शास्त्री की लेखनी ने विद्वज्जगत् के सम्मुख सिद्ध कर दिखाया। सांख्य दर्शन पर तो वह काम कर दिखाया है जो सदियों तक याद रखा जायेगा। प्रसिद्ध पौराणिक विद्वान् पं. गिरधर चतुर्वेदी ने कहा था '**सांख्य के निरीश्वरवाद का कलंक तो उदयवीर शास्त्री ने धो दिया।**' निश्चित ही उनके द्वारा लिखा गया एक-एक पृष्ठ विश्व के साहित्य में अनुपम वृद्धि है। यू.जी.सी. के अध्यक्ष श्री दौलत सिंह कोठारी ने आचार्य जी से कहा था कि 'आपके लिखे प्रत्येक पृष्ठ पर पी. एचडी. की उपाधि दी जा सकती है। आचार्य जी ने षड्दर्शनों का भाष्य किया जिसका नाम उन्होंने '**विद्योदय भाष्य**' रखा।' इसके अतिरिक्त सांख्यदर्शन का इतिहास (इस ग्रन्थ पर उन्हें मंगलाप्रसाद पारितोषिक दिया गया था), सांख्य सिद्धान्त, प्राचीन सांख्य सन्दर्भ, वेदान्त दर्शन का इतिहास आदि अत्यन्त खोजपूर्ण पुस्तकें लिखीं। उनके लेख भी तात्कालिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे जो कि बड़े ही सारगर्भित और विद्वत्तापूर्ण होते थे। आज भी वे लेख पत्र-पत्रिकाओं की शोभा बढ़ाते रहते हैं। पिछले २ वर्षों में परोपकारी पत्रिका भी आचार्य जी के अनेक लेखों को 'ऐतिहासिक कलम से' नामक कॉलम से प्रकाशित कर चुकी है।

देश-विभाजन के बाद आचार्य जी को लाहौर छोड़ना पड़ा। दो वर्षों तक जालन्धर में अध्यापन कार्य किया। इसके बाद ज्वालापुर, बीकानेर, देहरादून आदि नगरों में

भी अध्यापन कार्य किया। सन् १९५८ ई. में शोधकार्य करने के लिये आचार्य जी ने गाजियाबाद को चुना। विरजानन्द वैदिक शोध संस्थान से जुड़कर प्रतिदिन १४-१५ घण्टे शोधकार्य तथा लेखन करते रहे। गाजियाबाद में ही रहते हुये आचार्य जी ने विद्योदय भाष्य लिखा। तथा यहीं पर रहकर आचार्य जी को समाज का वह व्यवहार झेलना पड़ा जिस पर लेखनी चलाने का मेरा तनिक भी मन नहीं है। वह इतिहास का एक ऐसा काला पृष्ठ है जिसका उल्लेख करके मैं कलम के काले मुँह पर और कालिख़ पोतना नहीं चाहता। यही वो घटनायें घटी जिसके कारण आचार्य जी को न चाहते हुये भी अपनी बेटी के घर (अजमेर) का आसरा लेना पड़ा। सारी जिन्दगी विद्या के लिये लगा देने वाला यह मनीषी अपने बुढ़ापे में भारी संकटों से जूझा।

एक बार डॉ. धर्मवीर जी उनसे मिलने गये तो यह महापण्डित अपनी विवशता को कुछ इन शब्दों में बयां क़रता है 'धर्मवीर! मैं तुम्हें एक कप दूध भी नहीं पिला सकता।' अहो! कैसी विडम्बना है। संसार को इतना दिया कि खुद खाली हो गये। इस पर यह विपत्ति कि आचार्य जी की धर्मपत्नी को पक्षाघात का रोग हो गया और इतना ही नहीं कुछ ही वर्षों के बाद आचार्य जी को भी पक्षाघात का रोग हो गया। दरिद्रता ही क्या कम थी जो शरीर भी साथ छोड़ने लगा। सचमुच ही आचार्य जी पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा। पर विपत्तियाँ कब ऋषि के वंशजों को अपने मार्ग से डिगा सकी हैं? मृत्यु शय्या पर भी यह कपिल का वंशज दर्शन और इतिहास की गुत्थियाँ सुलझाने में लगा रहा। आज विद्वज्जगत् में आचार्य उदयवीर शास्त्री को **'आधुनिक कपिल'** के नाम से जाना जाता है। आचार्य जी से जब उनकी अन्तिम इच्छा पूछी गयी तो उत्तर दिया ''सभी प्राप्त शिलालेखों का फिर नये सिरे से अध्ययन होना चाहिये, तभी भारतीय इतिहास का वास्तविक स्वरूप प्रकाशित हो सकता है।'' अपने इतने बड़े कार्यों पर भी अन्तिम समय में वे सन्तुष्ट न थे। शायद इस दुनियां को कुछ और भी देना चाहते थे। मृत्यु से कुछ समय पूर्व आचार्य विरजानन्द दैवकरणि (इतिहासवेत्ता) उनसे मिलने अजमेर पहुँचे तो आचार्य जी ने कहा-'दैवकरणि जी, मैं आपसे पुलकेशिन् द्वितीय के काल पर विचार-विमर्श करना चाहता हूँ, आप कुछ समय दे सकेंगे? और लगभग दो घण्टे तक इस गहन विषय पर दैवकरणि जी से विचार करते रहे।'

आचार्य जी ने आयु तो अच्छी पायी पर अन्तिम दिनों में समाज के व्यवहार से वे खिन्न हो गये। ऐसा उनकी आत्मकथा को पढ़कर पता चलता है। अपना सारा दर्द अपनी आत्मकथा में कह डाला है। जिन लोगों ने उनका सहयोग किया उनकी भी चर्चा की है और जिन्होंने असहयोग किया उनकी भी। लगभग चार वर्ष लगातार रुग्ण रहने के बाद १७ जनवरी सन् १९९१ ई. को आचार्य पण्डित उदयवीर शास्त्री इस दर्दभरी दुनिया से कूच कर गये। रुग्णता की हालत में उनकी बड़ी बेटी श्रीमती ऊषा जी ने उनकी बहुत सेवा की। आर्यजगत् श्रीमती ऊषा जी के ऋण से कभी उऋण न हो सकेगा।

पाठक गण! बस इतनी सी कहानी है पण्डित प्रवर आचार्य श्री उदयवीर शास्त्री की। हम कहकर चुप हो जायेंगें और आप सुनकर। या सम्भव है कि कुछ लोगों के मुँह से ये शब्द भी निकल जाये कि 'अरे! रे! रे! बड़ा बुरा हुआ हमारे विद्वानों के साथ।' या कुछ लोग यह भी जानने की कोशिश करें कि कौन थे वे लोग जिन्होंने आचार्य के साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया? कुछ लोग मेरे लेख की प्रशंसा कर देंगे तो कुछ लोग आलोचनायें। पर बन्धुओ! यह समस्या का हल नहीं है। यह तो एक उदयवीर शास्त्री की कहानी है। इतिहास उठकार देखें तो मालूम होगा कि कितने उदयवीर शास्त्री आये जिन्होंने अपना सर्वस्व आर्यसमाज की उन्नति में लगा डाला और वो भी समाज की प्रताड़नाओं को झेलते हुये। तब जाकर हम उस धरातल पर खड़े हो पाये हैं जहाँ हम यह गर्व कर सकते हैं कि हम आर्यसमाज की परम्परा के संवाहक हैं। जहाँ हम दुनिया के समस्त बुद्धिजीवियों के सम्मुख यह चेलेंज कर सकते हैं कि हमारा साहित्य दुनिया के सर्वोत्कृष्ट साहित्य में अपना स्थान रखता है। जहाँ हम मुक्त कंठ से यह उद्घोष कर सकते हैं कि भारत को स्वाधीन करने में सर्वाधिक रक्त आर्यसमाजियों का बहा है। पर विचार कर देखें कि हमारा यह गर्व कहीं उस भिखारी के जैसा तो नहीं? जो अपने पूर्वजों को राजा-महाराजा बताता फिरता है और खुद

कटोरा लेकर भीख माँगता है।

बन्धुओ! पण्डित लेखराम का कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं था जो किसी यवन के छुरे से अपनी अंतड़ियाँ निकलवा बैठे। यति शिरोमणि स्वामी श्रद्धानन्द की ऐसी कोई कामना नहीं थी कि उनके सीने में गोलियाँ दागी जायं। फिर इन महान् आत्माओं ने अपना बलिदान क्यूँ दिया? क्यूँ अपना सर्वस्व लुटाकर आर्यसमाज को जिन्दा रखा? इस प्रश्न का उत्तर जिस दिन हमारा युवा खोज लेगा उसी दिन आर्यसमाज में फिर पं. लेखराम और स्वामी श्रद्धानन्द जीवित हो उठेंगे। वरना तब तक हमें स्वामी सत्यप्रकाश जी के शब्दों में यही कहना पड़ेगा कि 'आर्यसमाज लंगर और जलसों तक सिमटकर रह गया है।'

मेरी यह कड़वी बातें उन रुढ़िवादियों के लिये नहीं जो अपना अधिक समय दूसरों के दोष निकालने या अनावश्यक आलोचनायें करने में व्यतीत करते हैं, बल्कि उन सुप्त प्रतिभाओं के लिये हैं जो स्वयं को ऋषि दयानन्द का सच्चा अनुयायी मानते हैं। मित्रो! वह समय दूर नहीं जब हम भी इतिहास बन जायेंगे और हमारी सन्तति हम पर गर्व की बजाय खेद प्रकट करेगी। अभी समय है कि हम खुद से पूछें क्या हम वास्तव में ऋषि दयानन्द के अनुयायी हैं?

क्या हम वास्तव में वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना अपना परम धर्म मानते हैं? क्या हम वास्तव में प्रत्येक की उन्नति को अपनी उन्नति समझते हैं? क्या आज संसार हमें यह प्रमाण-पत्र दे सकता है कि 'आर्यसमाजी है तो सत्य ही बोलेगा?' क्या हमने आर्यसमाज के दिग्गज साहित्य को पढ़ा है? क्या हम आर्यसमाज के गौरवशाली इतिहास और साहित्य की सुरक्षा के लिये कोई कदम बढ़ा रहे हैं? क्या हमारा चिन्तन इस ओर भी जाता है कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आर्यसमाज को क्या करना चाहिये? कहीं हम किसी राजनैतिक पार्टी के समर्थक बनकर ही तो नहीं रह गये? कहीं हम उस हिन्दुत्व का झण्डा लिये तो नहीं घूमते, जिसके खण्डन में ऋषि ने सत्यार्थप्रकाश का ग्याहरवाँ समुल्लास लिखा? क्या हम ऋषि के सन्देश को जन-जन तक पहुँचाते हैं? कहीं हम आर्यसमाज को अपनी आजीविका का साधन तो नहीं मानते? कहीं हम अपने हठ, दुराग्रह की वजह से असत्य की ओर तो नहीं झुकते?

हमारी बातें नकारात्मक और फिजूल लग सकती हैं, पर केवल उन्हें जो अपनी बदसूरती का इल्जाम आईने को देते हैं। अगर उपर्युक्त प्रश्नों पर हम सच्चे हृदय से विचार करें तो निश्चित ही फिर कोई उदयवीर शास्त्री सताया न जायेगा। वरना दिखावा हम ही क्या? सारी दुनिया करती है।

सामवेद पारायण महायज्ञ

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द उद्यान जमानी, इटारसी का वार्षिकोत्सव दिनांक १ से ३ मार्च २०१९ को सामवेद पारायण यज्ञ के साथ आयोजित किया जा रहा है, जिसमें आर्यजगत् के मूर्धन्य विद्वानों के वेदोपदेश का सुअवसर प्राप्त होगा। परोपकारिणी सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल, उपप्रधान श्री ओम मुनि, मन्त्री श्री कन्हैयालाल आर्य, भजनापदेशक पं. भूपेन्द्र सिंह एवं पं. लेखराज आदि उपस्थित रहेंगे। बाहर से पधारने वाले अतिथियों के आवासादि की व्यवस्था आश्रम की ओर से ही रहेगी।

परोपकारिणी सभा का यह संस्थान मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्र में आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार करने में संलग्न है। आर्यजन पधारकर एवं अधिकाधिक सहयोग देकर इसे और अधिक गति प्रदान करें।

निवेदक

परोपकारिणी सभा, अजमेर

महर्षि दयानन्द उद्यान, जमानी, इटारसी (म.प्र.)

सम्पर्क- ०७५०९७०६८२८, ९४२५०४०३१०

आर्यजगत् के समाचार

१. स्थापना दिवस मनाया- महिला आर्यसमाज मानसरोवर, रजत पथ, जयपुर, राज. ने ११ से १४ अक्टूबर २०१८ को ऋग्वेद पारायण यज्ञ के साथ २४वाँ स्थापना दिवस मनाया। यज्ञ के ब्रह्मा कुरुक्षेत्र के स्वामी विदेह योगी तथा वेदपाठी श्रीमती श्रुति आर्या, जयपुर रहीं। श्री संदीप आर्य, मेरठ ने मधुर भजनों की प्रस्तुति दी।

२. आर्यसमाज की स्थापना- दौसा आर्यसमाज की स्थापना यजुर्वेद पारायण यज्ञ के साथ की गई। मानवनिर्माण, विश्व शान्ति तथा प्रदूषण निवारणार्थ अभियान के अन्तर्गत श्री सरदारसिंह के निवास पर यजुर्वेद पारायण यज्ञ २८ दिसम्बर से १ अक्टूबर २०१८ तक आयोजित किया गया। आचार्य उषर्बुद्ध के ब्रह्मत्व में श्रीमती स्मृति शास्त्री व रचना आर्य ने वेदपाठ किया। कु. भूपेन्द्रसिंह ने पं. लेखराज शर्मा के साथ भजन-रसगंगा प्रवाहित की।

३. शताब्दी समारोह मनाया- विश्वभारती अनुसंधान परिषद् ज्ञानपुर, भदोही द्वारा आर्यजगत् एवं संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान् पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी के जन्मशती पर शताब्दी समारोह का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्वकुलपति प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र, विशिष्ट अतिथि कुलपति प्रो. राजाराम शुक्ल एवं विशिष्ट अतिथि नासा वैज्ञानिक डॉ. ओमप्रकाश पाण्डेय, डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री, निर्मल शरण महाराज, सभा के अध्यक्ष काशी विद्यापीठ के पूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी आदि ने अपना सारगर्भित उद्बोधन प्रदान किया। डॉ. कपिलदेव द्विवेदी की स्मृति में प्रकाशित ग्रन्थ 'कपिल-कौस्तभ' का विमोचन मंचासीन अतिथियों द्वारा किया गया। स्वागत भाषण डॉ. विद्याशंकर त्रिपाठी व कार्यक्रम का संचालन डॉ. भारतेन्दु द्विवेदी ने किया।

४. शिविर सम्पन्न- यज्ञशाला गुरुकुल लाड़वा, इन्द्री रोड का ८२वाँ चरित्र निर्माण शिविर हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर नेत्र जाँच शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें लगभग २७४ मरीजों की जाँच, ऑपरेशन व चश्मे वितरित किये गये। शिविर का शुभारम्भ श्री एम.के. जैन तथा शहीद श्री प्रगटसिंह रम्भा की पत्नी श्रीमती रमनजीत कौर ने किया। शिविर में यज्ञ का शुभारम्भ जस्टिस प्रीतमपाल द्वारा यजमान के रूप में किया गया। यज्ञ आचार्य कृष्णदेव शास्त्री व उनके ब्रह्मचारियों ने सम्पन्न कराया।

५. वार्षिकोत्सव मनाया- गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय शुक्रताल का ५४वाँ वार्षिक उत्सव २० से २३ नवम्बर २०१८ को धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ।। इस अवसर पर यजुर्वेद पारायण महायज्ञ आचार्य यज्ञवीर शास्त्री-दिल्ली के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर स्वामी आनन्दवेश ने अपना आशीर्वाद दिया। महोत्सव चौ. तेजपाल आर्य की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

शोक समाचार

६. आर्ष गुरुकुल झज्जर (हरियाणा) के वरिष्ठ स्नातक एवं पूर्व अधिष्ठाता वेद, दर्शन, संस्कृत साहित्य एवं व्याकरण तथा आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् आचार्य प्रिंटिंग प्रैस रोहतक के संस्थापक **आचार्य वेदव्रत शास्त्री** का दिनांक ४ दिसम्बर को अचानक हृदयाघात से निधन हो गया। परोपकारिणी सभा आचार्य वेदव्रत शास्त्री को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए ईश्वर से उनकी सद्गति की कामना करती है।

७. श्रीमती पार्वती देवी पत्नी श्री रामकरण जी लाहोटी निवासी कड़ैल, जिला अजमेर का आकस्मिक निधन माह १६ दिसम्बर २०१८ में हो गया है। आपका पूरा परिवार नैष्ठिक आर्यसमाजी है।

८. श्रीमती सरोज देवी गहलोत का निधन २० दिसम्बर २०१८ को हो गया है। आपके सुपुत्र श्री किशन सिंह जी गहलोत नगर आर्यसमाज अजमेर के एक प्रतिष्ठित एवं निष्ठावान् सदस्य हैं, जिनका परिवार साप्ताहिक सत्संग में नियमित रूप से उपस्थित रहता है। परोपकारी परिवार की तरफ से प्रभु से प्रार्थना है कि दोनों पुण्यात्माओं को सद्गति प्रदान करे तथा उनके परिवारों को इस आकस्मिक आघात को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

९. दिल्ली के यज्ञनिष्ठ परिवार के प्रमुख श्री दर्शन अग्निहोत्री की धर्मपत्नी **श्रीमती सरोज कुकरेजा** का गत २४ नवम्बर को निधन हो गया है। परोपकारिणी सभा दिवंगतात्मा का हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है।

१०. आर्यजनों के लिए हार्दिक दु:ख का विषय है कि प्रसिद्ध आर्यश्रेष्ठी, यज्ञप्रेमी, कई आर्य संस्थाओं के पोषक, उत्तरप्रदेश के बिजनौर जनपद के किरतपुर निवासी **श्री दीपचन्द आर्य** का मार्गशीर्ष शुक्ल १२ सम्वत् २०७५ वि. तदनुसार १९ दिसम्बर २०१८ को निधन हो गया है। आपका सम्पूर्ण जीवन महर्षि दयानन्द के कार्यों को बढ़ाने में समर्पित रहा। परोपकारिणी सभा माननीय दीपचन्द आर्य के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए हार्दिक शोक प्रकट करती है।

महर्षि दयानन्द बलिदान दिवस २०१८
(ऋषि मेला)

डॉ. वेदपाल (प्रधान-परोपकारिणी सभा)
प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' (उपप्रधान-परोपकारिणी सभा)

डॉ. सुरेन्द्र कुमार (संरक्षक-परोपकारिणी सभा)
श्री विजय शर्मा (भीलवाड़ा)

वेद कण्ठस्थ करने वाले प्रतिभागियों को पुरस्कार राशि एवं महर्षि दयानन्द कृत साहित्य भेंट करते हुए विद्वत् गण

श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' (पुस्तकाध्यक्ष -परोपकारिणी सभा)
डॉ. प्रियंवदा 'वेदभारती' (कन्या गुरुकुल, नजीबाबाद)

डॉ. सोमदेव शतांशु (गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार)
मा. रामपाल आर्य (प्रधान-आर्यप्रतिनिधि सभा, हरियाणा)

श्री जगदीश शर्मा
(प्रबन्ध सम्पादक- दैनिक भास्कर समूह)

आर जे/ए जे/80/2018-2020 तक प्रेषण 30-31 दिसम्बर २०१८ आर.एन.आई. ३९५९/५९

परोपकारिणी सभा के वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नवीन पुस्तकें

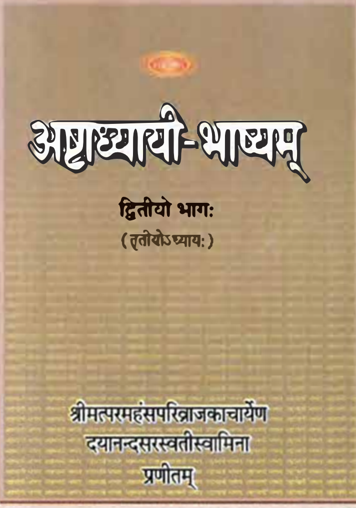

अष्टाध्यायी भाष्य भाग–२
भाष्यकार–महर्षि दयानन्द सरस्वती

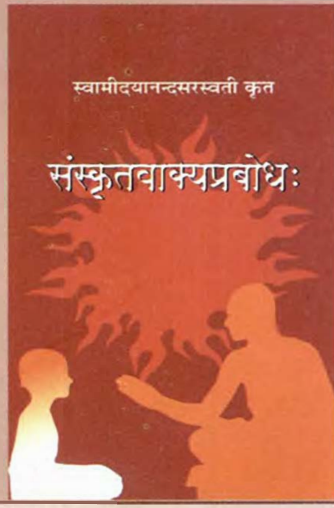

संस्कृत वाक्य–प्रबोध
लेखक–महर्षि दयानन्द सरस्वती

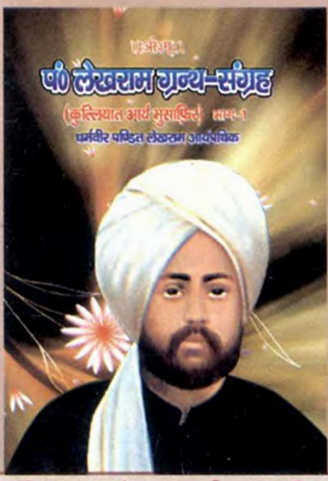

कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर
लेखक–पण्डित लेखराम 'आर्यमुसाफ़िर'
संपादक–प्रा.राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

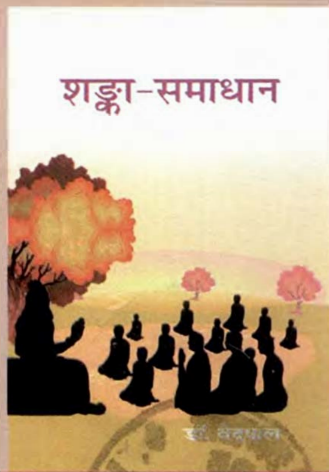

शंका समाधान
लेखक–डॉ. वेदपाल

प्रेषकः

परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१